ISSN : 3107-9206 RJBIL/25/A1723

आरोग्यम् स्वास्थ्य पत्रिका
Aarogyam Swasthya Patrika

अक्टूबर 2025 आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादर : वर्ष 01, अंक 03

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय
कड़वड़, नागौर रोड, राष्ट्रीय राजमार्ग सं. 65, जोधपुर (राज.)
Phone : 0291-2795312, Fax : 0291-2795300
E-mail : rau_jodhpur@yahoo.co.in
Website : https://rauonline.in

होम्योपैथी के छात्रों ने किया शैक्षणिक भ्रमण

सी.एच.आर.डी. द्वारा आयोजित व्याख्यान में विद्यार्थियों को बताए गए शोध प्रकाशन के व्यावहारिक गुर

यूनानी मेडिकल कॉलेज में समारोह पूर्वक मनाया गया स्वतंत्रता दिवस

विश्वविद्यालय में भव्य गौ संगोष्ठी का आयोजन

विश्वविद्यालय प्लेसमेंट सेल के माध्यम से बी.एससी. नर्सिंग छात्रों के लिए प्लेसमेंट साक्षात्कार आयोजित

यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ यूनानी, टोंक में सीएचआरडी द्वारा यकृत रोगों का यूनानी चिकित्सा से प्रबन्धन विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित

आरोग्यम् स्वास्थ्य पत्रिका
अनुक्रमणिका

1.	अनुक्रमणिका		1
2.	कुलपति सन्देश		2
3.	सम्पादकीय		3
4.	मोटापे का बढता बोझ	प्रियंका कपूर	4
5.	हृदय रोगों के बचाव में आयुर्वेद की उपादेयता	डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा	7
6.	सुरभि और स्वास्थ्य संरक्षण	भूपेंद्र हुड्डा	11
7.	स्वास्थ्य संरक्षण में आयुर्वेदीय 'आहार विज्ञान' की भूमिका	डॉ. अरविन्द अग्रवाल	18
8.	आयुर्वेद मतानुसार स्वस्थ जीवन शैली	डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा	20
9.	फलों का राजा आम (*Mangifera indica*)	स्वाति गोयल, डॉ. मनोज अदलखा	23
10.	हाथों की स्वच्छता का महत्त्व एवं विधि	प्रो. (डॉ.) गोविन्द प्रसाद गुप्ता, डॉ. अंकिता आचार्य	28
11.	आयुर्वेद में आहार और विहार : यकृत स्वास्थ्य के लिए एक समग्र दृष्टिकोण	डॉ. ऐश्वर्य पाण्डे प्रो. अशोक शर्मा	31
12.	होम्योपैथिक प्रिस्क्रिप्शन में अंतिम निदान एवं ICD–11 कोड का महत्त्व	शुभम शर्मा, डॉ. मनाली त्यागी	35
13.	पोडोफॉइलम पेल्टैटम–सिद्धांत से लेकर आधुनिक ऑन्कोलॉजी (कैन्सर विज्ञान) तक	डॉ. गौरी शर्मा	37
14.	होम्योपैथी में प्रतिस्पर्धा–आधारित चिकित्सा शिक्षा (सीबीएमई) : चुनौतियां और अवसर	डॉ. योगेश्वरी गुप्ता, डॉ. पवित्रा गौर	40
15.	श्वास और भय का संवादः क्लौस्ट्रोफोबिया (Claustrophobia) में प्राणायाम की भूमिका	डॉ. शिखा सिंह तरोलिया, डॉ. ब्रह्मानंद शर्मा, डॉ. सौरभ अग्रवाल	43
16.	दांतों की सड़न : कारण एवं निवारण	डॉ. राकेश कुमार शर्मा	46

सम्पादक मण्डल

संरक्षक — प्रो. (वैद्य) गोविंद सहाय शुक्ल, कुलगुरू

सह संरक्षक — प्रो. चन्दन सिंह, प्राचार्य पीजीआईए
श्री अखिलेश कुमार पिपल, कुलसचिव
श्री मंगलाराम विश्नोई, नियन्त्रक (वित्त)

सम्पादक — डॉ. राकेश कुमार शर्मा
निदेशक, मानव संसाधन विकास केन्द्र

सह सम्पादक — डॉ. मनोज कुमार अदलखा, उपकुलसचिव

सहायक सम्पादक

आयुर्वेद	होम्योपैथी	योग	यूनानी
प्रो. देवेन्द्र सिंह चाहर	डॉ. मनाली त्यागी	डॉ. चन्द्रभान शर्मा	डॉ. नाज़िया शमशाद
प्रो. हरीश कुमार सिंघल	डॉ. पुनीत शाह	डॉ. किशोरी लाल शर्मा	डॉ. सैयद मुजीबुर्रहमान
डॉ. हेमन्त राजपुरोहित	डॉ. तनुज राजवंशी	डॉ. विनोद गौतम	डॉ. फिरोज खान
	प्रो. राजेश कुमावत	डॉ. मार्कण्डेय सिंह	डॉ. मो. अकमल

कुलपति सन्देश

आयुर्वेद का उद्देश्य केवल रोग का निवारण नहीं, बल्कि जीवन को समग्रता में स्वस्थ और संतुलित बनाना है। इसी विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए आरोग्यम् स्वास्थ्य पत्रिका का यह नया अंक हमारे विश्वविद्यालय की उस जीवंत भावना का प्रतीक है जो ज्ञान, अनुसंधान और जनसेवा तीनों को एक सूत्र में पिरोती है।

आज का युग परिवर्तन और नवाचार का युग है। वैश्विक स्तर पर स्वास्थ्य की परिभाषा निरंतर बदल रही है, और ऐसे समय में भारतीय चिकित्सा परम्पराएँ विश्व को संतुलन, सह–अस्तित्व और प्राकृतिक जीवनशैली का संदेश दे रही हैं। इस दिशा में हमारे विश्वविद्यालय का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो केवल शिक्षण का केंद्र नहीं, बल्कि विचार, शोध और नवप्रवर्तन का सशक्त मंच बन चुका है। आरोग्यम् स्वास्थ्य पत्रिका इस बौद्धिक यात्रा की प्रेरणादायक अभिव्यक्ति है। यह विद्यार्थियों, अध्यापकों और शोधकर्ताओं के विचारों का संगम है जहाँ पारंपरिक ज्ञान आधुनिक दृष्टि से संवाद करता है, और जहाँ लेखन, अध्ययन एवं अनुसंधान समाजहित में परिवर्तित होते हैं।

मुझे विश्वास है कि इस अंक के माध्यम से नए विचार, नए प्रश्न और नए समाधान सामने आएँगे जो न केवल आयुष चिकित्सा–जगत बल्कि समूचे स्वास्थ्य विमर्श को समृद्ध करेंगे।

संपादकीय टीम, संकाय सदस्यों, शोधार्थियों एवं विद्यार्थियों को मैं हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ देता हूँ कि उन्होंने इस प्रकाशन को ज्ञान, सृजनशीलता और सामाजिक उत्तरदायित्व का माध्यम बनाया है।

शुभकामनाओं सहित,

प्रो. (वैद्य) गोविंद सहाय शुक्ल

कुलगुरू

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् राजस्थान

आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर

सम्पादकीय

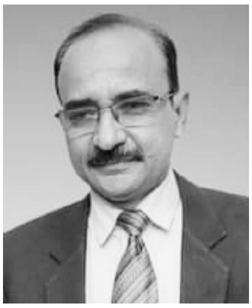

मानव जीवन की सबसे बड़ी आवश्यकता स्वास्थ्य है, केवल शरीर की नहीं, मन और आत्मा की भी। आयुर्वेद इसी समग्र स्वास्थ्य दृष्टि का आधार है, जो **"स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं, आतुरस्य विकार प्रशमनं"** के सिद्धांत पर सदियों से मानवता का मार्गदर्शन कर रहा है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय की आरोग्यम् स्वास्थ्य पत्रिका का यह नया अंक इसी सनातन ज्ञान को आधुनिक संदर्भों से जोड़ने का प्रयास है। इस युग में जहाँ जीवनशैली, तनाव और पर्यावरणीय असंतुलन से उत्पन्न रोग लगातार बढ़ रहे हैं, वहाँ आयुर्वेद और योग केवल उपचार नहीं, बल्कि जीवन के प्रति संतुलन और सजगता का दर्शन प्रस्तुत करते हैं।

यह अंक शोध, चिंतन और नवाचार की उस भावना का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें विद्यार्थी, शिक्षक और शोधार्थी मिलकर परंपरा को नए सिरे से परिभाषित करते हैं। पत्रिका में प्रकाशित विविध लेख न केवल शास्त्रीय सिद्धांतों की व्याख्या करते हैं, बल्कि उन्हें आज के संदर्भों, जैसे निवारक स्वास्थ्य, मानसिक संतुलन, पोषण, जीवनशैली और पर्यावरणीय सामंजस्य से जोड़ते हैं। हमारे विश्वविद्यालय के माननीय कुलगुरु प्रो. (वैद्य) गोविंद सहाय शुक्ल के मार्गदर्शन में यह पत्रिका न केवल शैक्षणिक अभिव्यक्ति का माध्यम बन रही है, बल्कि आयुर्वेद को समाज के प्रत्येक स्तर तक पहुँचाने के मिशन में भी अग्रसर है।

आज आवश्यक है कि आयुर्वेद केवल चिकित्सालयों तक सीमित न रहे, बल्कि यह जनजीवन का व्यवहार बने। प्रत्येक व्यक्ति अपने दैनिक आचरण में 'स्वास्थ्य संस्कृति' को अपनाए। आरोग्यम् स्वास्थ्य पत्रिका इसी उद्देश्य को आगे बढ़ाती है। यह केवल एक प्रकाशन नहीं, बल्कि एक संवाद है परंपरा और प्रयोग, शास्त्र और समाज, विचार और अनुभव के बीच।

इस अंक के प्रकाशन में योगदान देने वाले सभी लेखकों, शोधार्थियों, संपादकीय टीम तथा मार्गदर्शकों का मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। मुझे विश्वास है कि यह अंक पाठकों को नई दृष्टि, नई प्रेरणा और स्वास्थ्य के प्रति एक गहरा संवेदनात्मक जुड़ाव प्रदान करेगा। सदैव स्वस्थ रहें, सशक्त रहें।

शुभकामनाओं सहित,

(डॉ. राकेश कुमार शर्मा)
संपादक एवं निदेशक
मानव संसाधन विकास केन्द्र
डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् राजस्थान
आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर

मोटापे का बढता बोझ

प्रियंका कपूर

क्या है मोटापा

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) मोटापे अर्थात् स्थूलता को वसा के असामान्य या अत्यधिक संचय के रूप में परिभाषित करता है जिससे स्वास्थ्य को खतरा होता है। मोटापा कुपोषण के दोहरे बोझ का एक पहलू है। वयस्कों और बच्चों में अधिक वज़न और मोटापे की दर लगातार बढ़ रही है। एक ही देश, एक समुदाय और एक ही घर में कुपोषण और मोटापे का एक साथ पाया जाना आम बात है। 25 या उससे अधिक बॉडी मास इंडेक्स (BMI) को अधिक वज़न और 30 अथवा उससे अधिक को मोटापे के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। BMI वयस्क के वज़न का स्वस्थ अथवा अस्वस्थ होने का आंकलन करने की मूल विधि है जिसकी गणना किलोग्राम में वज़न को मीटरवर्ग (किलोग्राम / मी.) में व्यक्ति की लम्बाई से विभाजित करके की जाती है।

निम्न और मध्यम आय वाले देश में बच्चे, शिशु और छोटे बच्चों के पोषण के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। साथ ही, ये बच्चे उच्च वसा, उच्च चीनी, उच्च नमक, घने और सूक्ष्म पोषकतत्वों से रहित खाद्य पदार्थों का सेवन करते हैं। जिनकी कीमत तो कम होती ही है, लेकिन पोषक तत्वों की गुणवत्ता भी आनुपातिक रूपेण कम होती है। इस आधार पर पैटर्न और शारीरिक गतिविधियों के कम स्तर के कारण बचपन में मोटापे में तेजी से वृद्धि होती है।

मोटापे के आँकड़े– (भारत और वैश्विक स्तर पर)

- **भारत–राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण–5** (National Family Health Survey i.e. NFHS -5) के अनुसार 24 प्रतिशत भारतीय महिलाएँ और 22.9 प्रतिशत भारतीय पुरुष अधिक वज़न अथवा मोटापे से ग्रस्त हैं।
- NFHS -5 वर्ष 2019–21के अनुसार अखिल भारतीय स्तर पर पाँच वर्ष से कम आयु के अधिक वज़न वाले बच्चों का प्रतिशत NFHS .4 (2015–16) के 2.1 प्रतिशत से बढ़कर 3.4 प्रतिशत हो गया। अधिक वज़न और मोटापे की दर विभिन्न राज्यों, जेंडर और ग्रामीण शहरी क्षेत्रों में 8 प्रतिशत से 50 प्रतिशत तक भिन्न–भिन्न है।
- **द लैंसेट** (The Lancet)– भारत में उदरीय मोटापे (कमर की परिधि के आधार) की व्यापकता महिलाओं में 40 प्रतिशत और पुरुषों में 12 प्रतिशत है। 20 वर्ष से अधिक आयु के वयस्कों में, 3 में से 1 को उदरीय मोटापा है। 4 में से 1 सामान्य मोटापा है, और 5 में से 1 को उच्च कोलेस्ट्रॉल है।
- **वैश्विक–वर्ष** 1990 से वर्ष 2022 की अवधि में बच्चों और किशोरों (5 से 19 वर्ष) में मोटापा 2 प्रतिशत से बढकर 8 प्रतिशत हो गया जोकि 4 गुणा वृद्धि है। वयस्कों (19 वर्ष से अधिक) में यह दर 7 प्रतिशत से बढकर 16 प्रतिशत हो गई है।

स्वास्थ्य संबंधी खतरा :–मोटापा सभी रोगों का कारण है। अधिक वज़न और मोटापा कई पुरानी बीमारियों के लिए प्रमुख जोखिमकारक है। जिसमें विभिन्न गैर–संचारी रोगों (NCD–Non communicable Disease) का जोखिम अत्यधिक हो जाता है।

- **मधुमेह**– भारत में मधुमेह के सबसे अधिक मामले हैं और मोटापा इंसुलिन का प्रतिरोध उत्पन्न करके टाइप–2 मधुमेह के जोखिम को बढ़ाता है।

सहायक प्रोफेसर,
पैथालोजी व माईक्रोबॉयोलोजी विभाग
यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ होम्योपैथी, जोधपुर

- **हृदय सम्बन्धी रोग**–भारतीयों को हृदयाघात और उच्च रक्तचाप जैसी हृदय संबंधी रोग का अनुभव अन्य देशों के लोगों की तुलना में कम से कम 10 वर्ष पहले होता है।
- **कैंसर**–भारत में मोटापे से संबधित कैंसर के मामले वर्ष 2022 में 14.6 लाख से बढकर 2025 तक 15.7 लाख होने की संभावना है।
- **जोडों के विकार**–अधिक वज़न के कारण जोड़ों पर दबाव पडता है जिससे घुटने के पुराने ऑस्टियोअर्थराइटिस और पीठ दर्द जैसे अपक्षयी रोगों का खतरा बढ़ जाता है।
- **मनोसामाजिक प्रभाव**–रोग के भय के कारण बच्चों के आत्म–सम्मान में कमी, अवसाद और चिंता उत्पन्न होती है तथा स्कूल में उनके प्रदर्शन एवं जीवन की गुणवत्ता पर भी असर पड़ता है। मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं उच्च कैलोरी वाले खाद्य पदार्थों को खाने की प्रवृत्ति की ओर ले जा सकती हैं जो आपके मस्तिष्क में आनंद के केन्द्रों को सक्रिय करती है।

आर्थिक निहितार्थ :–

- वर्ष 2019 में स्वास्थ्य देखभाल व्यय और उत्पादकता की हानि के कारण मोटापे के कारण भारत को 28.95 बिलियन अमेरिकी डॉलर (प्रति व्यक्ति 1800 रूपये) या सकल घरेलू उत्पाद का 1.02 प्रतिशत का नुकसान हुआ।
- वर्ष 2030 तक भारत का मोटापे से संबन्धित आर्थिक बोझ प्रति व्यक्ति 4700 रुपये या सकल घरेलू उत्पाद का 1.57 प्रतिशत हो सकता है।
- आर्थिक सर्वेक्षण 2024–25 मोटापे को एक स्वास्थ्य संबंधी चुनौती के रूप में देखता है तथा अल्ट्रा प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थों पर अधिक कर लगाने का सुझाव देता है।

मोटापे के कारण

- **कम शारीरिक गतिविधियां**–द लैंसेट के अनुसार ऑफिस की नौकरी व स्क्रीन पर अधिक समय बिताने जैसी जीवनशैली के कारण लगभग आधे भारतीय पर्याप्त रूपेण सक्रिय नहीं रहते हैं।
- **अस्वास्थ्यकर आहार**–उच्च वसा, नमक और चीनी वाले खाद्य पदार्थो का बढ़ता उपभोग तथा अस्वास्थ्यकर वसा से भरपूर आहार का उपभोग।
- **अपर्याप्त शहरी आधारभूत संरचना**–जैसे ट्रेफिक जाम, हरे–भरे स्थान की कमी और यातायात की भीड़ सक्रिय पाद भ्रमण की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करते हैं।
- **सामाजिक आर्थिक बाधाएं**–अस्वास्थ्यकर भोजन की उपलब्धता ने जीवनशैली में बदलाव और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की बढ़ती उपलब्धता ने मोटापे में योगदान दिया है। आर्थिक रूप से कमजोर लोग अक्सर स्वस्थ भोजन खरीदने और नियमित व्यायाम करने के लिए ज़रूरी संसाधनों से वंचित रहते हैं।

मोटापे के रोकथाम के लिए सरकार की पहल

- NCD की रोकथाम और नियत्रण हेतु राष्ट्रीय कार्यक्रम
- आयुष होलिस्टिक वेलनेस सेंटर

- **ईट राइट मेला** (Eat Right Mela) –ईट राइट ''लाईट राइट इंडिया आंदोलन'' का हिस्सा है, जिसमें भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (FSSAI) द्वारा बढ़ावा दिया जाता है।
- **फिट इंडिया मूवमेंट** (Fit India Movement) –यह भारत में एक राष्ट्रव्यापी अभियान है जिसका उद्देश्य व्यवहार में परिवर्तन लाना और अधिक शारीरिक रूप से सक्रिय जीवन शैली की ओर बढ़ाना है।
- **मिशनपोषण 2.0** : यह भारत सरकार का एक एकीकृत पोषण सहायता कार्यक्रम है, जिसे बच्चों, किशोरियों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं में कुपोषण की समस्या को दूर करने के लिए शुरू किया गया है।

भविष्य की राह

- **पोषण सुधार हेतु प्रयास**– भारत के पोषण सम्बन्धी प्रयासों को सुपोषण अभियान के रूप में पुनः परिकल्पित करना चाहिये, जिसमें अल्प पोषण एवं उचित सूक्ष्म पोषक तत्वों पर ध्यान केन्द्रित करना शामिल है। जापान के लोग समान्यतः जब उनका पेट भरने के करीब होता है, तो 80 प्रतिशत नियम (हरा हची बू) का पालन करते हैं अर्थात् वे खाना बंद कर देते हैं। भारत में मोटापे की समस्या से निपटने के लिए ऐसी प्रथाओं को अपनाया जा सकता है।
- **स्कूल आधारित पहल**–स्वस्थ भोजन एवं संतुलित आहार के साथ प्रसस्कृत खाद्य पदार्थो के जोखिमों को स्कूल पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाना चाहिए।
- **समय समय पर मोटापे की जाँच**– प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर मोटापे के जोखिम पर ध्यान दिया जाना चाहिये।
- **जनजागरुकता**– मोटापे को केवल एक व्यक्तिगत मुद्दे के रूपमें नहीं बल्कि एक लोक स्वास्थ्य चुनौती के रूप में पहचाना जाना चाहिए।

हृदय रोगों के बचाव में आयुर्वेद की उपादेयता

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा

वर्तमान आधुनिक भौतिकवाद के युग में विकृत जीवन शैली, अपथ्य एवं विरुद्ध खान–पान, रहन–सहन, ज्यादा मिर्च मसाले युक्त नमकीन भोजन, फ़ास्ट फूड, मिलावट तेल का सेवन, परिश्रम, व्यायाम का अभाव, आरामदायक जीवन, देर रात तक जागना,दिन में सोना, शराब, तम्बाकू, गांजा, अफीम, गुटका, सिगरेट आदि मादक पदार्थो का सेवन, चिंता, क्रोध, भय, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि हृदय रोग के प्रमुख कारण है।

अंधाधुंध दर्द निवारक एवं प्रतिजीवी औषधियों का अधिक मात्रामें सेवन आदि कारणों के चलते भी मानव समाज किसी न किसी रोग से ग्रस्त हो रहा है, जिसमें विशेष रूप से हृदय रोग, रक्तचाप, मधुमेह रोग (एक महामारी के रूप में) पूरे विश्व में व्यापक रूप से फैल रहा है। इन रोगों को लेकर आम व्यक्ति भयभीत एवं चिंतित है। चिंता होना स्वाभाविक भी है क्योंकि पूरे विश्व में इन रोगों के कारण लाखों व्यक्ति काल का ग्रास बन रहे हैं। इनके अलावा जिस तरह से कोविड–19 एवं वैक्सीन के बाद से साइलेंट हार्ट अटैक और अकस्मात् मृत्यु के केसों में बढ़ोतरी हुई है, वह भी एक विचारणीय बिंदु एवं जाँच का विषय है। यह बड़ा ही चिंतनीय विषय है। विश्व स्वास्थ्य संगठन भी इस विषय को लेकर काफी चिंतित है। विकृत जीवन शैली, गलत खान–पान, रहन–सहन एवं कोविड–19 के बाद जिस प्रकार से हृदय रोग हो रहे हैं, हार्ट अटैक, हार्ट फ़ेल के कारण लोगों कि मृत्यु हो रही है–इससे मानव समाज में एक भय की स्थिति व्याप्त हो गयी है। हम यहाँ वर्तमान में भय व्याप्त कर रहे हृदय रोग पर चर्चा करेंगे कि हम ऐसी क्या जीवन शैली, क्या खान–पान, क्या रहन–सहन अपनायें जिससे हम स्वस्थ रहें, हमारा हृदय स्वस्थ रहे। आयुर्वेद का प्रयोजन एवं उद्देश्य भी यही है कि स्वस्थ व्यक्ति अपने स्वास्थ्य की रक्षा कैसे करे ? आयुर्वेद के शास्त्रों में तो कहा गया है कि जिस कारण से जो रोग उत्पन्न होता है उस कारण का पहले त्याग करो।

निदानपरिवर्जनम् – आयुर्वेद के शास्त्रों में आचार्यो द्वारा वर्णित जो कारण एवं लक्षण बताए गए है। वर्तमान में वे आम व्यक्ति की दिनचर्या जीवन शैली में विद्यमान हैं।आयुर्वेद के शास्त्रों में हृदय रोग के निम्नांकित लक्षण बताए गए हैं:

प्रमुख लक्षण –

- श्वास कष्ट
- हृदय में पीड़ा
- हृदय में धड़कन बढ़ना

सामान्य लक्षण :–

- रक्तचाप वृद्धि
- शारीरिक व मानसिक थकान
- सीढ़ियों में चढ़ते समय साँस फूलना
- .रक्ताल्पता

वरिष्ठ चिकित्साधिकारी प्रभारी, ग्रेड–।
राजकीय आयुर्वेद औषधालय/आयुष्मान आरोग्य मंदिर–गणेश्वर, जिला–सीकर

- कभी–कभी कफ में खून आना
- मुखमंडल कि आभा यानि ओज का नष्ट होना
- चक्कर आना
- पर्याप्त नींद नही आना
- भूख की कमी
- कब्ज एवं पेट में गैस

आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र ही नहीं वरन यह एक स्वस्थ जीवनचर्या जीने का एक सुगम साधन है। आयुर्वेद विज्ञान में वर्णित हितकर आहार–विहार, दिनचर्या, ऋतुचर्या, रात्रिचर्या का भली भांति पालन करने वाला व्यक्ति स्वस्थवृत्त, व्यायाम, योग, शारीरिक परिश्रम एवं उपर्युक्त जो कारण हृदय रोग के बताए गए हैं, उनसे दूर रहते हुए जीवन–यापन करने वाला व्यक्ति हृदय रोग से पीड़ित नहीं होता है।

हृदय को स्वस्थ, मजबूत एवं हृदय रोगों से बचाने वाले पदार्थो का सेवन एवं पालनीय नियमः

ऐसे खाद्य पदार्थ या द्रव्य एवं हृदय को स्वस्थ रखने वाले नियम व सिद्धांत जो हृदय की आंकुचन शक्ति को बढ़ाकर रक्त वाहिनियों को बलवान बनाएं, इनका सेवन करने से व्यक्ति हृदय रोगों से बच सकता है –

1. **भ्रमणः**– प्रातःकाल भ्रमण करना अनिवार्य है जिससे हृदय एवं फेफड़ों को शुद्ध प्राण वायु (ऑक्सीजन) प्राप्त हो सके। इसके अलावा व्यायाम, अनुलोम–विलोम, ध्यान, त्राटक, भ्रामरी आदि योगासन भी करने चाहिए।
2. **पानी का अधिक मात्रा में सेवन** :– लामा यूनिवर्सिटी में किए गए एक अध्ययन एवं शोध की रिपोर्ट के अनुसार पानी अधिक मात्रा में पीने से हार्ट अटैक से बचा जा सकता है तदनुसार पानी अधिक मात्रा में पीने से 54% हार्ट अटैक का खतरा कम हो जाता है। मनुष्य के शरीर में 72% पानी होता है जो रक्त को पतला करने का काम करता है। पर्याप्त मात्रा में पानी पीने से धमनी में रक्त का थक्का नहीं जमता है।
3. **अनार का रस** :– शिक्षा वैज्ञानिकों के एक अध्ययन एवं शोध के अनुसारअनार या अनार का रस सेवन करने से हृदय संबंधी बीमारियों से सफलता से बचा जा सकता है। एक शोध में पाया गया हैं कि अनार का रस हानिकारक रसायन जिसे बैड कोलेस्ट्रोल (एलडीएल) कहते हैं उसकी मात्रा को कम करने के साथ–साथ कोलेस्ट्रोल बनने की प्रक्रिया को कम कर देता है। इससे रक्त वाहिनियों की प्रणाली भी ठीक रहती हैं तथा धमनी भी सख्त नहीं होती हैं।
4. **लहसुन का सेवन** :– लहसुन हृदय रोगियों के लिए रामबाण होता है। इसका पूरे विश्व में हृदय रोग निवारक के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह उच्च रक्तचाप को भी कम करता है। अभी हाल ही में सवाई मानसिंह चिकित्सालय, जयपुर में हुए एक अध्ययन के अनुसार लहसुन के तेल के सेवन से बढ़े हुए कोलेस्ट्रोल अर्थात् रक्त वसा को कम किया जा सकता है। लहसुन अद्वितीय द्रव्य है। चार–पांच लहसुन की कली को कूटकर दूध में डालकर अच्छी तरह उबाले फिर उस दूध का सेवन करने से लाभ होता है।
5. **फल व सब्जी का सेवन** :–आयुर्वेदिक चिकित्सा विज्ञान में हृदय रोगों के बचाव की दृष्टि से फल, शाक आदि का बड़ा महत्त्व बताया गया है जैसे–पपीता, अनार, आम, सेव, आंवला, अमरूद, लीची, कीवी, अंगूर, फालसा, मौसमी, संतरा, केला, नारियल पानी, मुनक्का–दाख, नाशपाती, लहसुन, निम्बू, टमाटर, मेथी, बथुआ, तुरई, लोकी, गाजर, चुकंदर, पालक, अरबी, परवल, करेला, हींग, इलायची, सौंठ आदि खाद्य पदार्थो को निरंतर आहार में शामिल करना चाहिए ताकि हृदय रोगों से पूर्ण बचाव हो सके।

6. **अम्ल प्रधान द्रव्य** :–अम्ल प्रधान द्रव्यों को आयुर्वेद के शास्त्रों हृद्य माना है अर्थात् ये हृदय को शक्ति देने में समर्थ हैं। अम्ल प्रधान द्रव्यों में आंवला, संतरा, मौसमी, नीम्बू, आम, बेर आदि विशेष हैं। हृदय की कमज़ोरी को दूर करने में नीम्बू, आंवला, मौसमी, संतरा सर्वोत्तम हैं। इनके सेवन से रक्त वाहिनियों में कोमलता आती है। इससे हृदय सशक्त होकर हृदय रोगों से बचाव करता है। ये रक्त को पतला करने का काम करते हैं।

7. **आम का सेवन**:– आम को भी हृदय के लिए परम् शक्तिशाली बताया गया है। इसमें खनिज, लवण, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम फास्फोरस, लोहा, विटामिन आदि होते हैं। अमेरिका के सुप्रसिद्ध डॉक्टर विल्सन के मतानुसार आम के अलावा विश्व के किसी भी फल में इतने अधिक परिमाण में विटामिन नहीं होते है। आम में मक्खन की अपेक्षा 100 गुना पोषक तत्व होते हैं।

8. **शहद का सेवन**:–हृदय को शक्ति देने के लिए विश्व कि समस्त औषधियों में मधु यानी शहद सर्वोतम माना है। शहद का शुद्ध होना अनिवार्य है। जब रक्त में ग्लाइकोजेन के अभाव में रोगी बेहोश होने लगे, दम घुटने लगे, कमजोरी या सर्दी के कारण हृदय की धड़कन अधिक हो जाए तो दो चम्मच शहद सेवन से नवीन शक्ति उपलब्ध होती है। यह रक्त वाहिनियों की उत्तेजना को घटाता है।

9. **दही का सेवन**:– आयुर्वेद के शास्त्रों में दही को कोलेस्ट्रोल अर्थात रक्त वसा को कम करने, हृदय को शक्ति देने की दृष्टि से श्रेष्ठ बताया है। अमेरिका के डॉक्टर प्रो. जोर्ज के मतानुसार दही के सेवन से हृदय मजबूत होता है तथा हृदय को बल प्राप्त होता है।

10. **कच्चे आलू का सेवन**:–हृदय की जलन में कच्चे आलू का रस पीना सर्वश्रेठ बताया है।

11. **टमाटर का सेवन**:–ढाई सौ ग्राम टमाटर के रस में 3 ग्राम अर्जुन छाल का चूर्ण मिलाकर निरंतर कुछ दिन सेवन करने से हृदय की जकड़न ठीक होती है। टमाटर में प्रोटीन, आयरन, फोस्फोरस, क्लोरीन, ताम्र आदि तत्त्व विशेष रूपेण पाए जाते हैं जो हृदय के लिए अत्यंत लाभप्रद हैं।

12. **लौकी का सेवन**:– ढाई सौ ग्राम लौकी को अच्छी तरह छीलकर इसका रस निकालें। रस निकालते समय 5–6 पुदीने की पत्तियां तथा 8 पत्ती तुलसी की डाल दें। फिर इस रस में चार–पांच कालीमिर्च का चूर्ण, इच्छा अनुसार सैंधा नमक डालकर सुबह सायं पी लें। पीने के बाद 1 घंटे तक कुछ नहीं खाए पिएं।

13. 50 ग्राम गेहूं की सूजी को गाय के घी में हलवा बनाकर अर्जुन छाल चूर्ण 10 ग्राम, इलायची चूर्ण 5 ग्राम, मिश्री 50 ग्राम मिलाकर प्रतिदिन 25–25 ग्राम हलवा रोज़ सेवन करें। यह हृदय की दुर्बलता को दूर कर शक्ति प्रदान करता है।

इस प्रकार उपर्युक्त खाद्य पदार्थों को अपने नियमित आहार में शामिल करने से हृदय रोगों से बचाव संभव है।

सामान्य हृदय रोग के बचाव एवं हृदय को मजबूत बनाने वाले आयुर्वेद के योग जिनके शरीर में कोई दुष्प्रभाव नहीं है –

1. **अर्जुनक्षीरपाक**:– अर्जुन की छाल के 20 ग्राम चूर्ण को गाय के दूध 100 ग्राम तथा जल 150 ग्राम में डालकर मंद अग्नि पर चाय की तरह अच्छी तरह से औटायें। जब जल अच्छी तरह से जल जाए, फिर छान कर पियें। यदि इसमें कमल गट्टे का चूर्ण 10 ग्राम एवं शतावरी का चूर्ण 5 ग्राम और मिला दिया जाएं तो विशेष लाभदायक है। आयुर्वेद के शास्त्रों में इस योग को हृदय रोगियों के लिए और हृदय रोगों के बचाव के लिए सर्वोत्तम बताया है।

2. **पुष्करमूल चूर्ण**:– तीन ग्राम पुष्करमूल चूर्ण सुबह–शाम ठंडे पानी से लेने से हृदय मजबूत होता है।

3. **अर्जुनारिष्ट**:– अर्जुनारिष्ट 20–20 मि.ली. खाना खाने के बाद बराबर पानी मिलाकर पीने से हृदय मजबूत होता है। हृदय रोगियों के लिए तथाहृदय रोग से बचाव के लिए यह योग सर्वश्रेष्ठ है।

4. **आंवला चूर्ण**:– आंवला चूर्ण 5–5 ग्राम सुबह–शाम समान मात्रा में मिश्री का चूर्ण मिलाकर लेना चाहिए। इससे हृदय

मजबूत होता है और रक्त पतला रहता है।

5. **दालचीनी का चूर्ण**:—दालचीनी का चूर्ण बना लें और 1 ग्राम की मात्रा में शहद के साथ या चाय, कॉफी, ग्रीन टी या दूध में डालकर ले सकते हैं।

इसके अलावा भी आयुर्वेद के शास्त्रों में हृदय रोग से सम्बन्धित अनेक आयुर्वेद के योग हैं। कोई भी आयुर्वेद की औषधि रजिस्टर्ड आयुर्वेद चिकित्सक की देखरेख में ही लेनी चाहिए। इसके साथ ही एक महत्वपूर्ण बिंदु यह भी है कि आजकल जैसे शादियों में डांस करते हुए या व्यायाम आदि शारीरिक श्रम करते हुए अथवा जिम में वर्कआउट करते हुए अचानक हार्ट अटैक आकर आकस्मिक मृत्यु के केस आ रहे हैं। इसके लिए आयुर्वेद ने पूर्व में ही सिद्धांत प्रतिपादित कर रखा है कि **अर्ध शक्त्या निषेवेत** अर्थात् योग, व्यायाम या शारीरिक श्रम अपनी आधी शक्ति तक ही करना चाहिए। कभी भी इस मामले में अति नहीं करनी चाहिए। आधी शक्ति से तात्पर्य यह है कि जब श्रम अथवा व्यायाम करते हुए हमारी साँस मुँह से आने लगे अर्थात श्वास फूलने की प्रकृति से लेकर मुँह से साँस लेने कि प्रतीति होने लगे, तब हमें व्यायाम अथवा श्रम रोक कर अपनी सामान्य स्थिति में आकर पुनः आगे का काम करना चाहिए। इस प्रकार हम यदि आयुर्वेद मतानुसार जीवनचर्या को अपनायेंगे तो निश्चित रूप से वर्तमान में जो हृदय सम्बन्धी बीमारियाँ हो रही हैं, उनसे बच सकते हैं।

सुरभि और स्वास्थ्य संरक्षण

भूपेंद्र हुड्डा

प्रस्तावनाः– हमें क्या प्रिय है इसका उत्तर व्यक्ति, वस्तु, काल व परिस्थिति के अनुसार बहुत भिन्न –भिन्न हो सकता है, और ये प्रियत्व बड़ा अपेक्षा रखने वाला होता है। बाल्यावस्था में जो प्रिय होता है, वह यौवन में नहीं। एक स्थान पर प्रिय होने वाली वस्तु दूसरे स्थान में प्रिय नहीं रह जाए, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। किन्तु एक तत्त्व है जो सबको समान रूप से प्रिय है वो है हम स्वयं। स्वयं के प्रति प्रियत्व से ही सब में जिजीविषा बनी हुई है। आत्महन्ता भी अप्रिय जगत व जागतिक अनुभवों से स्वयं को दूर करने के लिए मृत्यु में ही स्वयं का हित देख कर पाप करते हैं। किन्तु स्वयं का प्रियत्व बना रहता है। मनुष्य स्वयं से अधिक अन्यों के अहित व कष्ट का भाव रख कर भ्रमवश स्वहित के लिए ही प्रयत्न करता है। मोक्ष पथ का पथिक स्वप्रीत के प्रभाव में त्रिविध दुःखों वाले संसार से मुख मोड़ लेता है। स्वयं को जान लेने अथवा स्वयं में स्थित हो जाने की भूख सबमें बड़ी भारी है। अपनी–अपनी चेतना व गुणों के अनुरूप स्व–स्थिति के लिए, स्थिरता व प्रीति के लिए सब कार्य करते हैं। कोई भगवद्–प्रेमी निष्कामी भक्त ही हो जाए तो बात थोड़ी अलग होगी। किन्तु वह भी आत्म में ही स्थिर होता है। "आत्मा हि परमो हरिः" के रूप में आकर्षण का विषय परमात्मा तत्त्व हो जाता है। मूल बात है स्वस्थिति या स्वास्थ्य। सभी को सुख के लिए स्वस्थ होना पड़ेगा। सभी का प्रयत्न इसी ओर ही है। इस प्रयत्न को ज्ञानपूर्ण व बोधयुक्त बनाना ही प्रयास है और उसी में स्वास्थ्य की सफलता है। स्वस्थ है तो उस अवस्था को संरक्षित करना पड़ेगा। स्व स्थिति के लिए स्थिरता आवश्यक है। तमस् में जड़ता है, रजस् में चांचल्य है, केवल सत्व में स्थिरता है। सुरभि या गाय सत्व का आगार है। लेख में सुरभि का स्वास्थ्य रक्षा में महत्त्व जानेंगे।

स्वास्थ्य का सूक्ष्म गूढ़ार्थ व गौ की महत्ताः–

समग्र भारतीय दर्शन ''स्व'' को लक्ष्य बना के प्रज्ञोद्भूत हुआ है। ''स्व'' में स्थित होने के उपाय रूप में सर्वांगपूर्ण वेदावली प्रकट हुई है। यह सारभूत बात है। 'स्व आत्मनि' स्व माने आत्मा/स्वयं/अहम् –बोधि–तत्त्व (वाचस्पत्यम् महाशब्दकोश)।

योगसूत्रों में अष्टांगिक योग का लक्ष्य इसी ''स्व'' में अवस्थित हो जाना है। कहा भी है :

'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्'' (योगसूत्र १.३)

यही स्व व्यवस्थिति ही मोक्ष या मुक्ति है। पुराणवाक्य भी इन दर्शनसूत्रों से मतैक्य रखते हैं। यथा कहा भी हैः

मुक्तिः हित्वान्यथारूपंस्वरूपेणव्यवस्थितिः (श्री.भा.पू. 2/10/6)

अर्थात्–अविद्या–माया कल्पित रूपों को व स्थितियों को त्याग कर स्व–रूप में स्थिति ही मुक्ति है।

हठयोग प्रदीपिका पर **श्री ब्रह्मानंद कृत 'ज्योत्स्ना' टीका** में 'स्वस्थ' शब्द को आयुर्वेदीय संहिताओं के स्वप्नसदृश रूप में ही स्पष्ट किया गया है।

स्वस्थो जाग्रदवस्थायां सुप्तवद्योऽवतिष्ठते ।

बीएनवाईएस चतुर्थ वर्ष छात्र
एसएलबीएस योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा महाविद्यालय, जोधपुर

निःश्वासोच्छ्वास–हीनश्चनिश्चितं मुक्त एव सः ।।

(हठयोगप्रदीपिकायां चतुर्थोपदेशः श्लोकः ११२)

इसकी टीका में कहा हैः

स्वस्थ इति । स्वस्थः प्रसन्नेन्द्रियान्तःकरणः । एतेन तन्द्रामूर्च्छादि–व्यावृत्तिः ।

अर्थात् स्वस्थ वह है जिसके इन्द्रियाँ और अन्तःकरण प्रसन्न हों। इससे तन्द्रा, मूर्च्छा आदि (तमस् व रजस्) की निवृत्ति होती है।

आयुर्वेदीय संहिता की परिभाषा तो जगविदित है ही यथाः

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियाः।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते।। **(सुश्रुत संहिता सू. १५/१०)**

महात्रिपुरसुंदरी, राजराजेश्वरी, कामेश्वरी, पराशक्ति भगवती श्रीदुर्गा के लिए ब्रह्माण्ड पुराणान्तर्गत आने वाले श्री ललिता सहस्रनाम में भी स्वस्था (स्त्रीलिंग) शब्द प्रयुक्त हुआ है। यथाः

स्वस्थास्वभावमधुरा धीरा धीरसमर्चिता ।।१६६।।

(मूल श्रीललितासहस्रनाम)

दुःखकृत चांचल्य अभावात् स्वस्थास्वस्मिन्न एवस्थिता वा ।

(इदं श्लोकस्य सौभाग्यभास्कर टीका)

त्रिविध दुःखों से होने वाली चंचलता और सुखाभाव जिनमें नहीं हैं, जो स्वयं में स्थित हैं (स्वपद से च्युत नहीं हैं) वे स्वस्थ (करुणाकम्बुधि श्री ललिता) है।

भगवत्तत्त्व की भगवत्ता भी 'स्व' से च्युत न होने में है।

स भगवः कस्मिन् प्रतिष्ठित इति स्वे महिम्ने इति होवाचेतिश्रुतेः ।

(छान्दोग्य उपनिषद् ७/२४/१)

श्री नारद का प्रश्न होता है कि सर्वजीवाजीव जगत के अधिष्ठान (भगवन्त) की प्रतिष्ठा अवस्थिति किस में हो सकती है? श्रुति सनत कुमार के मुखारविन्द से समाधान करती है कि ''स्वयं में'' अर्थात् ईश्वर स्वीयमहिमाधारक है इत्यर्थः।

भगवन्त स्वस्थ हैं। अंशी और अंश के गुणैक्य से और नित्य सम्बन्धी होने से जीव को भी स्वरूपतः स्वस्थ होना चाहिए।

ईश्वर अंश जीव अविनाशी।

चेतन अमल सहज सुखराशी **(बालकांड दोहा–११७)।**

उक्त प्रसंग में सार बात यही निकलती है कि देहाध्यास दोष ही अस्वस्थत्व का मूल है। पूर्णरूपेण स्वास्थ्य तो रज्जु सर्प अवबोध से मुक्त होकर देहाध्यास से बाहर आकर आत्मबोध प्राप्त करने से ही होता है। और चूंकि कहा है कि **शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।** इसलिए देह समदोष, समधातु, समाग्नि की अवस्था में और इन्द्रिया, मन व आत्मा प्रसन्न होनी चाहिए। इन दैहिक तत्त्वों की समता को भी सहायक योगदान का महत्त्व करते हुए स्वास्थ्य ही कहा गया है। किन्तु यदि विषय भोग ही लक्ष्य बना लिया गया है तो दोष, धातु, अग्नि, मल व क्रिया के सम हो जाने पर भी देह मन, बुद्धि व आत्मा के रागादिरोगों से सतत अनुषक्त रहेगी। हम स्वस्थ नहीं हो पावेंगे। संरक्षण तो बाद की क्रिया है, वह भी नहीं होगी।

यह स्वास्थ्य पूरे—पूरे रूप में प्राप्त करवाने में सुरभि व सुराधिष्ठात्री गाय सहायक व स्वतंत्र रूपेण दोनों भांति समर्थ है। यह कथन आप्त उपनिषद् वाक्यों से भली भांति पुष्ट होता है।

तमुपनीय कृशानामबलानां चतुःशता गा निराकृत्योवाचेमाः सोम्यानुसंव्रजेति ता अभिप्रस्थापयन्नुवाचनासहस्रेणावर्तेयेति स ह वर्षगणं प्रोवास ता यदासहस्रं सम्पेदुः।।

(छान्दोग्य उपनिषद ४/४/५)

दीक्षा के उपरान्त गौतम ऋषि ने चार सौ दुर्बल एवं कृशकाय गौओं का चयन किया। सत्यकाम से सम्बोधित होकर गौतम ऋषि ने कहा— हे सौम्य! इन गायों को ले जाकर पालना। सत्यकाम जब उन्हें ले जा रहे थे, तब उन्होंने कहा— जब तक इनकी संख्या एक सहस्र न हो जाए, मैं पुनः नहीं लौटूँगा। अतः वे अनेक वर्षों तक वन में निवास करते रहे, जब तक कि वे गायें एक सहस्र नहीं हो गईं।

लौटने पर वे ब्रह्म तेजपुंज से युक्त दिखाई पड़ते हैं। गौतम ऋषि के प्रश्न पर वे गौ अनुकम्पा से बैल, अग्नि, हंस व मुद्ग द्वारा ब्रह्मविद्या प्राप्ति की बात बताते हैं एवं शेष विद्या गुरूगृह में पाते हैं।

यह ब्रह्मविद्या स्वरुप बोधकारिणी होती है और सात्विकता ब्रह्मबोध की प्रथम व बड़ी महत्त्वपूर्ण आवश्यकता होती है। सात्विकता में ही ब्रह्मणत्व स्थिर हो पाता है। सात्विकता के अनेक साधनो में श्रेष्ठ कोटि में गौसेवन व गव्य पदार्थो का सेवन आता हैं। गाय सत्वगुण का मूर्तिमंत स्वरुप कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। गौ से ब्रह्मबोध के योग्य बुद्धि आएगी।

आहार शुद्धौ सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्षः।

(छा.उ. ७/२६/२)।

ऐसी सुपुष्ट धी, धृति, स्मृति विभ्रंशत्व को प्राप्त नहीं होगी। उससे प्रज्ञापराध नहीं होंगे, इन्द्रियों का विषयों के साथ असात्म्य संयोग नहीं होगा। इस कारण से सबल इन्द्रियां ऋतु व कालपरिणाम से त्रस्त होकर शरीर को रुग्ण नहीं बना पाएंगी।

गव्य पदार्थों के शास्त्रवर्णित स्वास्थ्य संवर्धक व संरक्षक गुण :—

गो दुग्धः—

जीवनीय आहार द्रव्यों में दूध श्रेष्ठ है एवं गोदुग्ध सभी दुग्धों में श्रेष्ठ है।

क्षीरं जीवनीयानम् **(च.सू. 25) एवं** गोक्षीरं क्षीराणाम् **(च.सू. 26)।**

अष्टांग संग्रह में गौदुग्ध व गव्य पदार्थों के निम्न गुण वर्णित हैं:—

अथ गव्यं तु जीवनीयं रसायनम्।
क्षतक्षीणहितं मेध्यं बल्यं स्तन्यकरं सरम्।
श्रमभ्रममदालक्ष्मी श्वासकासातितृट् क्षुधः।
जीर्णज्वरमूत्रकृच्छ्र रक्तपित्तं च नाशयेत्।। **(अ. सं. ६/५२।।)**

गोदुग्ध के गुण :–

- जीवनीय – जीवनीय शक्ति को बढ़ाने वाला है।
- रसायनम् – वृद्धावस्था को कष्टरहित व विलंबित करने वाला है, यथाः रसायनं दीर्घायुष्यम्।
- मेध्य – मस्तिष्क को प्रबल व बुद्धि को प्रखर करता है।
- बल्य – मांस, स्नायु व सम्पूर्ण शरीर के लिए बलवर्धक।
- स्तन्यकर– नवपुत्रवती माताओं में दुग्धवर्धक।
- सर– मल विशोधक प्रभाव युक्त होता है।

गोदुग्ध के प्रयोग :–

- श्रम – श्रमित व्यक्तियों में श्रमहरण हेतु प्रयुक्त किया जाना चाहिए।
- भ्रम– मानसिक थकान व विभ्रम हेतु उपयुक्त।
- क्षतक्षीणहितं– छाती पर आयी चोट में उपयोगी।
- मद– नशे से आयी दुर्बलता के उपचार हेतु दुग्ध जीवनीय होने के कारण उपयोगी है।
- अलक्ष्मी – अशुभ व दुष्कीर्ति का हरण करने वाला।
- श्वास–कास – श्वास–कास सम्बन्धी रोगों में उचित संस्कार व अनुपान से हितकर।
- तृट् – तृष्णा तृप्तिकर।
- क्षुत् – अधिक भूख या तीक्ष्णाग्नि में लाभप्रद।
- जीर्णज्वर– पुराने ज्वरों में उपयुक्त।
- मूत्रकृच्छ्र – मूत्रावरोध, अतिमूत्रलता आदि मूत्रविकारों में उपयुक्त।
- रक्तपित्त– रक्तदुष्टि में हितकारी होने से उपयोगी।

आचार्य चरक दुग्ध के निम्नानुसार दस गुण बताते हैंः–

स्वादु शीतं मृदुस्निग्धं बहलं श्लक्ष्णपिच्छिलम्।

गुरु मन्दं प्रसन्नं च गव्यं दशगुणं पयः। **(चरक सू. २७/२१७)**

गोदुग्ध के दस गुण हैंः तदनुसार यह स्वादिष्ट, शीतल, कोमल, चिकना, गाढ़ा, सौम्य, लसदार, भारी, बाहरी प्रभाव को विलम्ब से ग्रहण करने वाला तथा मन को प्रसन्न करने वाला होता है।

योगरत्नाकर के अनुसार दुग्ध के निषेध इस प्रकार हैंः–

नवज्वरे च मन्दाग्नौ आमदोषेषु कृच्छ्रिनाम्।
शूलिनां कफदोषेषु कासिनामतिसारिणाम् ।। यो.र. २।।

नवज्वर में, मंदाग्नि में, आमदोषों में और कृच्छ्रिन् रोगियों में, शूल, कफ दोष, खांसी और अतिसार वाले रोगियों में दुग्ध निषिद्ध है।

गो दधि :–

गो दधि शरद्, ग्रीष्म व वसंत ऋतु को छोड़कर शेष तीनों ऋतुओं में सेवनीय व लाभप्रद है।

स्निग्धं विपाके मधुरं दीपनं बलवर्धनम्।
वातापहं पवित्रं च दधिगव्यं रुचिप्रदम्। **(सुश्रुत सूत्र स्थान ६७–६८)**

गोदधि स्निग्ध, विपाक में मधुर, अग्नि दीपन करने वाला, वातहरण करने वाला, पवित्र करने वाला, बलवर्धक व रुचिप्रद गुण वाला होता है। वातज, पाचन, दौर्बल्य, अरुचि व मूत्र सम्बन्धी रोगों में विशेष लाभप्रद होता है।

गौ घृत :–

गौ घृत यज्ञकर्म व स्वास्थ्य दोनों के लिए समान रूप से उपयोगी है। इसके गुण इस प्रकार हैं

विपाके मधुरं शीतं वातपित्तं विषापहम्।
चक्षुष्यं अयं बल्यं च गव्यं सर्पिगुणोत्तमम् ।। (सुश्रुतसूत्र स्थान ६७)

विपाक में मधुर, शीतवीर्य, वात व पित को उपशमन करने वाला, विषहरण करने वाला, आँखों के लिए हितकारी, बल्य होता है व अन्य गव्य पदार्थों से अधिक गुणयुक्त होता है।

गौमूत्र :–

गोमूत्रं कटु तीक्ष्णोष्णं सक्षारत्वान्न वातलम्।

लघ्वग्निदीपनं मेध्यं पित्तलं कफवातनुत् ॥

शूलगुल्मोदरानाह विरेकास्थापनादिषु।

मूत्रप्रयोग साध्येषु गव्यं मूत्र प्रयोजयेत्॥ **(सुश्रुत सूत्र स्थान, २२०–२२१)**

गौमूत्र के गुण :–

- रसः कटु
- विशेषताएँः भेदक, लघु और दीपन गुण संयुक्त।
- वीर्यः उष्ण

गौमूत्र के लाभ :–

- यह जठराग्नि को बढ़ाता है।
- यह बुद्धि वर्द्धक है।
- कफ और वात को कम करता है।
- और अपने क्षारीय गुण के कारण वातानुलोमक है।

उपचार :–

- शूल, पेट के ट्यूमर, पेट का बढ़ना, पेट फूलना, आदि मूत्र प्रयोग से साध्य सभी रोगों में इसें प्रयुक्त किया जा सकता है।

उपयोग :–

- विरेचन व बस्तिचिकित्सा।

गौमय :–

यह स्वतंत्र रूप से पवित्रीकरण व उत्तम खाद के रूप में उपयोग आता है एवं औषध रूप में अन्य उपरोक्त गव्य पदार्थों के साथ पंचगव्य के रूप में प्रयोग में लिया जाता है।

गोमूत्रं गोमयं क्षीरंदधि सर्पिस्तथैव च।
समं योजितमेकत्र पञ्चगव्यमितिस्मृतम् ।५५।
पंचगव्यं देहशुद्धिकरं कफविनाशनम् ।५६। **(धन्वन्तरिनिघन्टु, मिश्रक वर्ग)**

गौमूत्र, गोमय का जल, दूध, दधि एवं घृत ये यदि समान मात्रा में मिलाकर सेवन किया जाए, तो उसे पंचगव्य कहते हैं। पंचगव्य शरीर को शुद्ध करता है तथा कफ विकार को नष्ट करता है।

पंचगव्य से निर्मित होने वाला घृत एवं उसमें गोमय के उपयोग व लाभ–

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैः समैघृतम् ।

सिद्धंपिबेदपस्मारकामलाज्वरनाशनम् ।। (चरक चिकित्सास्थान १०.१७)

गौ के गोबर का रस, दही, छाछ, दूध और मूत्र को समान भाग में मिला कर घी में पका लें। इसके सिद्ध होने पर, इसे पीने से अपस्मार (मिर्गी), कामला (पीलिया) और ज्वर का नाश होता है।

पंचगव्यं .... स्नेहनार्थं घृतं दद्यात्कामला पाण्डुरोगिणे। (च. चि. १६.४३)

स्नेहन के लिए कामला और पाण्डुरोग से पीड़ित रोगी को पंचगव्य घृत देना चाहिए।

गो संवर्धन व संरक्षण की आवश्यकता :–

स्वस्थ होना क्या है एवं स्वस्थ होने की आवश्यकता क्या है। ये विचार हम कर चुके हैं। स्वास्थ्य का संरक्षण–संवर्धन गौवंश के संरक्षण व संवर्धन से सीधा–सीधा जुड़ा हुआ है। यह कोई भावना नहीं अपितु एक आप्त, अनुमान व प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा प्रमाणित तथ्य है जो सत्य है। आत्मिक कल्याण हो या स्वास्थ्य कल्याण, गौ की भूमिका सदैव केंद्रीय है। भारतीय सभ्यता गौ केंद्रित रही है और इसके अनुपालक को स्वस्थ करती है। ईश अवतारों ने भी गोसेवन कर श्रेष्ठ पद पर अनुकरणीय आचरण किया। किन्तु वर्तमान में गौवंश के लिए पूज्य भावना तो बड़ी बात होगी, सामान्य सम्मान भावना भी मन में नहीं है। इसके कई कारणों में से सबसे बृहद् हेतु गौविषयक सही–सही ज्ञान जनमानस को न होना है। धन के लोभ में विदेशी पशुओं को दूध के लिए रखना, देशीय गायों को संकर बना देना, ये कृत्य वर्तमान में जनचेतना को रसातल में ले जा रहे हैं। सात्विकता का लोप हो रहा है। रजस्–तमस् के प्रभाव से आचरण विचार शून्यता और परिणामांधता में केवल क्षणलभ्य विषय भोगों की प्राप्ति के लिए हो रहे हैं। ऐसे आचरणों की गति शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक विकृति में ही हो सकती है। "स्व" की स्वाभाविक प्रकृति व अवस्थिति से शांति आती है। शांति सुख का आधार है एवं यह स्व–स्थ होना सात्विकता व जीवन की पवित्रता से संभव होता है। जिसके लिए पयस्विनी देववंदिता वेदस्वरूपा सुरभि गौमूलाधार है। ऐसी गो की क्रूरतापूर्वक होने वाले वध व पीड़ा से रक्षा होनी चाहिए। पशु बुद्धि से गाय व स्वयं दोनों का हित संभव नहीं होगा। यह संभव होता है जब कम से कम हम योग, आयुर्वेद, प्राकृतिक चिकत्सा के छात्र गायों में पूज्य बुद्धि रखें तथा अन्यों को भी इस हेतु प्रेरित करें।

निष्कर्षः–

बड़ी बात है, संरक्षण। जो स्वस्थ हैं, उनके स्वास्थ्य का विकृति से बचाव। रोगी को तो निश्चितरूपेण चिकित्सा सेवा प्रदान करनी ही है। किन्तु संरक्षण जीवन शैली के स्तर की बात है, चिकित्सालय की नहीं है। संरक्षण सभ्यता में अंतर्निहित है। संरक्षण अवबोध से, बुद्धि के प्रकाशित होने पर होता है, संरक्षण त्याग की अपेक्षा रखता है। सूक्ष्म प्राकृतिक तत्त्वों का स्थूल पदार्थों से गहरा सम्बन्ध व उन पर सीधा प्रभाव होता है। सूक्ष्म प्राकृतिक तत्त्व हैं मन, बुद्धि व अहंकार। अशुद्ध आहार–विहार से ये दूषित होते हैं। एक और गहरा सम्बन्ध प्रकृति में होता है। वह है व्यष्टि का समष्टि से सम्बन्ध। मानव के मन व बुद्धि दूषित होने से गाय, जीव व प्रकृति दोष के प्रभाव में आकर त्रस्त होंगे। और इस समष्टि के दोष से मानव विकृत होकर अस्वस्थ होंगे। निष्कर्षतः स्वास्थ्य एक व्यापक व परस्पर सम्बद्ध घटना है, ऐसा बोध होना चाहिए। तब स्वस्थ रहना सरल हो जाता है। इस प्रकार स्वास्थ्य मूल आधार में संरक्षित हो जाता है।

स्वास्थ्य संरक्षण में आयुर्वेदीय 'आहार विज्ञान' की भूमिका

डॉ. अरविन्द अग्रवाल

आयुर्वेद संपूर्ण स्वास्थ्य का एक दर्शन है जिसमें वर्णित रोग एवं रोगी से संबंधित अनेक सिद्धांतों में 'आहार विज्ञान' एक महत्वपूर्ण कड़ी है। पोषण से संबंधित आधुनिक विज्ञान की शाखाएं अब मानने लगी हैं कि आयुर्वेद का यह आहार विज्ञान केवल परंपरागत मान्यताओं का संग्रह मात्र नहीं है, बल्कि यह व्यावहारिक और वैज्ञानिक भी है। इस लेख में हम आयुर्वेदीय आहार विज्ञान में वर्णित महत्वपूर्ण सिद्धांतों की बात करेंगे ।

भोजन में सजगता

आयुर्वेद की मानें तो भोजन कभी भी अनजाने में ग्रहण नहीं करना चाहिए। चूंकि प्रत्येक खाद्य पदार्थ में कुछ विशिष्ट गुण होते हैं जैसे कि उसमें मौजूद पोषक तत्त्व, उस पदार्थ के सम्यक् पाचन में लगने वाला समय, उस पदार्थ का शरीर के विभिन्न तंत्रों की क्रियाओं जैसे कि चयापचय, ग्रंथियों व कलाओं के स्राव, स्वाद कलिकाओं आदि पर पड़ने वाला प्रभाव।

खाद्य पदार्थों का प्रसंस्करण

कुछ खाद्य पदार्थों को अधिक शरीरोपयोगी बनाने, सम्यक् रूप से आत्मसात करने, विभिन्न आहार तत्त्वों की जैव–उपलब्धता बढ़ाने या इनमें स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले किन्हीं अन्य गुणों के समावेश के लिए उनके सम्यक् प्रसंस्करण की आवश्यकता होती है जैसे कि खाद्य पदार्थों को धोना, भिगोना, उबालना, मथना, पीसना, किण्वन, किसी विशेष स्थान या द्रव्य में दबाकर रखना, प्रतीक्षा करना या किसी विशेष पात्र में भंडारण करना।

खाद्य संयोजन

आयुर्वेद के अनुसार जब दो या अधिक खाद्य पदार्थों का एक साथ उपभोग किया जाता है तो उनकी अंतरक्रियाओं से कुछ ऐसे लाभ या नुकसान हो सकते हैं जो उनके अकेले सेवन करने से सामान्यतः नहीं होते हैं जैसे कि दूध के साथ खट्टे पदार्थ सेवन करने से हानिकारक प्रभाव होना। ऐसे ही खट्टे द्रव्यों के साथ लौह तत्त्व वाले द्रव्य या दवाइयाँ लेना लाभकारी होता है।

भोजन की मात्रा

भोजन की सही मात्रा हमेशा से ही एक स्वास्थ्य निर्णायक कारक रहा है। भोजन की सही मात्रा निर्धारित करने के लिए आयुर्वेद व्यक्तिगत पाचन क्षमता को जानने पर जोर देता है। इसके लिए थाली में मौजूद द्रव्यों की कैलोरी पर ध्यान देने बजाय भोजन लेने के लिए प्रेरित करने वाले एवं भोजनोपरांत उत्पन्न होने वाले शारीरिक एवं मानसिक संकेतों जैसे कि भूख लगना, पेट भर जाना, भोजनोपरांत उठने–बैठने में आसानी रहना जैसे व्यावहारिक एवं सरल संकेतों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

भोजन का समय

भोजन का सही समय निर्धारण करना बहुत ही सरल परन्तु अतिमहत्त्वपूर्ण नियम है। आयुर्वेद के अनुसार पूर्व में लिए गए भोजन के पूरी तरह से पचने के बाद ही अगला भोजन लेना चाहिए। खाया गया कोई भी खाद्य पदार्थ पेट में उपस्थित पहले के अपचित भोजन में मिलकर लगभग सभी शारीरिक तंत्रों के सामान्य कार्यों में व्यवधान उत्पन्न करता है। परिणामतः एक

एमडी (आयुर्वेद), अनुसंधान अधिकारी (आयुर्वेद)
क्षेत्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, ईटानगर, अरुणाचल प्रदेश
(केंद्रीय आयुर्वेदीय विज्ञान अनुसंधान परिषद्, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली के अधीन)

असंतुलन की स्थिति पैदा होती है जिससे अनेक बीमारियों की नींव पड़ती है। यह सिद्धांत आजकल के अनियमित भोजनकाल के परिप्रेक्ष में प्रासंगिक लगता है।

काल के अनुसार भोजन

हमारे आसपास की पर्यावरणीय परिस्थितियाँ जैसे की मौसम की स्थिति का ज्ञान भी भोजन निर्धारण में एक अहम भूमिका निभाता है। स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए स्थानीय भूगोल, जलवायु और सांस्कृतिक प्रथाओं के साथ भोजन का तालमेल बनाए रखना एक अच्छी आदत है। मौसम के अनुसार भोजन में बदलाव किया जाना नितांत आवश्यक है जैसे कि गर्मियों में तरल, आसानी से पचने वाला और शीतलता प्रदान करने वाला भोजन तर्पण करने में सहायक होता है वहीं सर्दियों में देर से पचने वाला, चिकनाई युक्त और गर्माहट पैदा करने वाला आहार शारीरिक बल बढ़ाने के लिए उपयुक्त है। इस तरह के चक्रीय समायोजन हमारे शरीर के चयापचय और आंतरिक लय को बिगड़ने से बचाते हैं। फलस्वरूप हम अनेक मौसमी बीमारियों से बच जाते हैं।

अवस्था के अनुसार भोजन

व्यक्ति की आयु व उसके स्वास्थ्य की स्थिति का ज्ञान भी भोजन निर्धारण में एक अहम भूमिका निभाता है। आयुर्वेद के अनुसार बाल्यावस्था, वयस्कावस्था, वृद्धावस्था, स्वस्थावस्था, रुग्णावस्था आदि विशिष्ट शारीरिक परिस्थितियों के अनुरूप आहार में बदलाव करना अत्यावश्यक है। किसी भी रोग की अवस्था में हम वह आहार द्रव्य प्रयोग नहीं कर सकते, जिन्हें आम तौर पर हम स्वस्थावस्था में नियमित रूप से प्रयोग करते रहते हैं। इसी को दूसरे शब्दों में पथ्य–अपथ्य अथवा परहेज़ भी कहा जाता है जैसे कि बुखार या खांसी में सामान्य पानी की जगह उबला हुआ या गरम पानी पीना, रोटी सब्जी की जगह उबली हुई दाल पीना आदि।

व्यक्तिगत आदतें और अनुकूलन

भोजन से संबंधित परिस्थितिवश उत्पन्न व्यक्तिगत आदतों को भी आयुर्वेद स्वीकार करता है जैसे कुछ लोगों द्वारा वर्षों से रात में सोने से पहले एक–दो गिलास दूध पीना। यदि कोई व्यक्ति लंबे समय से किसी विशेष आहार के प्रति अभ्यस्त या अनुकूलित हो जाता है तो उसके भोजन में अचानक आमूल–चूल परिवर्तन थोपने के बजाय भोजन लेने के अन्य नियमों को ध्यान में रखते हुए, उसकी पहले से स्थापित आहार–लय का सम्मान करना बेहतर है ताकि उसे भोजन परिवर्तन से संबंधित अनावश्यक स्वास्थ्य समस्याओं से बचाया जा सके।

आहार के विषय में इस प्रकार का समग्र दृष्टिकोण मानव के स्वास्थ्य के साथ ही उसकी व्यक्तिगत प्राथमिकताओं और सामाजिक परंपराओं को भी संतुलित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भोजन के बारे में उपरोक्त तथ्य यह संदेश देते हैं कि आयुर्वेद केवल सख्ती से पालन करने वाले निषेधों की बात नहीं करता, बल्कि विवेकशील और वैज्ञानिक जीवनशैली अपनाने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करता है। भोजन के चयन में स्वाद के साथ–साथ जब ज्ञान और जागरुकता का भी समावेश हो जाता है तो वह भोजन ही हमारी प्राथमिक औषधि बन जाता है।

आयुर्वेद मतानुसार स्वस्थ जीवन शैली

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा

आधुनिक समय के इस भौतिकवाद के युग में विकृत जीवन शैली, अपथ्य एवं विरुद्ध खान–पान, रहन–सहन, मौसम परिवर्तन आदि अन्योन्य कारणों से व्यक्ति रोगग्रस्त हो रहे हैं। वर्तमान में हृदय रोग, मधुमेह, रक्तचाप वृद्धि, वातव्याधि, उदररोग, रक्तविकार आदि अनेक रोग विकृत जीवनशैली के परिणामस्वरूप होते हैं। शारीरिक ही नहीं विकृत जीवन शैली के चलते मानसिक रोग भी बढ़ रहे हैं। अतः आयुर्वेद में वर्णित स्वस्थवृत्त के अन्तर्गत जीवन शैली अनुसार व्यक्ति स्वस्थ जीवन यापन कर सकता है। आयुर्वेद का उद्देश्य भी यही है **"स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणं आतुरस्य विकार प्रशमनं च"** अर्थात् स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना एवं रोगी व्यक्ति के रोग का शमन करना है। इसलिए आयुर्वेद में कहा है कि **'सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमनुपालायेत्'** अर्थात् सब कुछ छोड़कर सबसे पहले शरीर की रक्षा करना व्यक्ति की सबसे प्रथम प्राथमिकता होनी चाहिए। आयुर्वेद के आचार्यों ने हजारों वर्ष पूर्व स्वस्थ व्यक्ति की व्याख्या की है जो वर्तमान में भी सटीक सिद्ध हो रही है।

वात–पित्त–कफ तीनों साम्यावस्था में हो, रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र सातों धातु साम्य अवस्था में हो, मल, मूत्र, स्वेद की प्रवृति सम हो, जिसकी आत्मा, इन्द्रियां मन स्वस्थ हो वह व्यक्ति स्वस्थ कहा जाता है। इसी को आयुर्वेद में कहा गया है कि **"दोषधातुमलमूलं हि शरीरम्"** विश्व स्वास्थ संगठन (WHO) ने स्वस्थ व्यक्ति की व्याख्या बतायी है कि जिसमें व्यक्ति पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण की स्थिति में होता है न कि बीमारी या दुर्बलता का अभाव होता है, वह स्वस्थ है। यह परिभाषा वर्तमान परिपेक्ष्य में आयुर्वेद में हजारों वर्ष पूर्व वर्णित स्वस्थ की व्याख्या से समानता रखती है। यदि व्यक्ति आयुर्वेद मतानुसार बतायी गयी दिनचर्या, ऋतुचर्या, आहार–विहार, आचार–विचार का पालन करे तो वह स्वस्थ, सुखमय एवं खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकता है।

आयुर्वेद मतानुसार निम्नानुसार स्वस्थ जीवन शैली

दिनचर्या :–

- **सूर्योदय से पूर्व उठना**:– ब्राह्ममुहूर्त (सूर्योदय से दो घण्टे पहले) में उठना चाहिए।
- **उषः पान**:– ताम्रपत्र या अन्य पात्र में रात्रि को रखा जल पीना चाहिए। थोडा गुनगुना जल हो तो ज्यादा श्रेष्ठ रहेगा।
- **शौच जाना**:– शौच के समय अपने दांतों को दबाकर रखे, बैठकर यदि शौच करे ज्यादा श्रेष्ठ है अन्यथा अपनी सुविधानुसार भी निवृत्त हो सकते हैं।
- **दातुन**:– नीम, बबूल, खैर, अपामार्ग आदि की दातुन सर्वश्रेष्ठ मानी गयी हैं। इसके अतिरिक्त सप्ताह में एक बार सरसों तेल में चुटकी भर नमक डालकर मंजन करना चाहिए। इससे दांत स्वस्थ एवं दृढ़ होते हैं।
- **अभ्यंग**:– तिल या सरसों के तेल से मालिश करनी चाहिए।
- **स्नान**:– यथासम्भव ठण्डे जल से स्नान करना चाहिये। विशेष परिस्थितियों में सादा गुनगुने जल से स्नान कर सकते हैं।
- **योगासन**:– प्राणायाम, अनुलोम–विलोम, कपालभांति, भ्रामरी, भस्त्रिका या अन्य योग, व्यायाम, आसन अनिवार्य रूप से करने चाहिए।

वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्साधिकारी
राजकीय आयुर्वेद औषधालय गणेश्वर (सीकर)

- **ईश्वर वन्दनाः**– प्रत्येक व्यक्ति को अपने–2 धर्म, पंथ अनुसार ईश्वर वन्दना करनी चाहिए।

- **पौष्टिक आहारः**– सूती कपड़े में दो दिन पहले गेहूं 25 ग्राम, मूंग 25 ग्राम, चना 25 ग्राम, मैथी 15 ग्राम, किशमिश, अखरोट, काजू, बादाम आदि मेवे सामर्थ्य एवं इच्छानुसार डालकर पानी डालकर भिगोकर रख दें। दो दिन बाद इन को प्लेट में डालकर थोड़ी पीसी हुई काली मिर्च पाउडर, गुड़ या शहद, सैंधा नमक डालकर सेवन करना चाहिए।

स्वास्थ्य रक्षक संजीवनी पेयः–

तुलसी की पत्ती–5 नग, सौंठ चूर्ण–चौथाई चम्मच (छोटी), नीम की पत्ती–1 नग, मधुयष्ठी चूर्ण–चौथाई चम्मच, मुनक्का बीज रहित–10 नग, दालचीनी–चौथाई चम्मच, कालीमिर्च–5 नग सैंधा नमक स्वादानुसार इनको चार गिलास पानी में डालकर उबालें। तीन गिलास पानी शेष रहने पर छानकर पूरे दिन में पीने से स्वास्थ्य रक्षा और पाचन प्रणाली के सामान्य रोगों से बचाव संभव है।

स्वास्थ्य सूत्रः–

- **निशान्ते पिबेत् जलंः**– रात के अन्त में अर्थात् सुबह बासी मुंह जल पीना चाहिए। इससे पाचन प्रक्रिया ठीक रहती है।

- **भोजनान्ते पिबेत तक्रंः**–भोजन के बाद दोपहर में छाछ पीनी चाहिए। इससे पाचन प्रणाली सुदृढ़ होती है।

- **दिवसस्यान्ते पिबेत् दुग्धंः**– दिन के अन्त में अर्थात् रात को दूध पीना चाहिए।

- **भोजनान्ते शत पदम् गच्छेत्ः**– भोजन के पश्चात् सौ कदम पैदल चलना चाहिए।

भ्रमणः–

सुबह – शाम नित्य प्रति 2–3 किलोमीटर तेज चाल से भ्रमण (घूमना) चाहिए। इससे हृदय, मधुमेह, रक्तचाप, उदर रोग, वातव्याधि आदि से पूर्ण बचाव संभव है।

रात्रिचर्याः–

- रात में जल्दी ही समय पर भोजन कर लेना चाहिए। सायं का भोजन हल्का ही होना चाहिए ताकि पाचन प्रक्रिया ठीक रहे।

- रात्रि निद्रा के लिए मानी गयी है। स्वास्थ्य की दृष्टि से 8 घंटे की नींद अनिवार्य है। इसलिए जल्दी सोना व जल्दी उठना स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से उत्तम माना गया है। व्यक्ति को इसकी आदत डालनी चाहिए।

- रात्रि जागरण कदापि नहीं करना चाहिए। इससे पाचन प्रणाली ख़राब होकर शरीर और मन ख़राब होता है।

- देर रात तक टी.वी., मोबाइल, कंप्यूटर आदि का उपयोग नहीं करना चाहिए।

- मोबाइल को रात को पास में रखकर नहीं सोना चाहिए। इससे निकलने वाली किरणों का शरीर पर दुष्प्रभाव होता है।

- यथा सम्भव A.C. (ए.सी.) का भी कम से कम उपयोग करना चाहिए।

ऋतुचर्या ः–

ऋतुचर्या वैसे तो बहुत बड़ा विषय है, लेकिन ऋतुओं में सामान्य जीवनचर्या को कैसे रखना चाहिए। यह जानना आवश्यक है।

- **ग्रीष्मऋतु**ः—ग्रीष्मऋतु में सूर्य की तेज किरणों से शरीर की आर्द्रता समाप्त हो जाती है। इसलिए इस ऋतु में विशेषकर तरल, शीतल, मधुर, ताजा, हल्के पदार्थों का सेवन करना चाहिए। छाछ, दही, आंवले का मुरब्बा, नारियल पानी, चन्दन शर्बत, नींबू पानी, मौसमी फल, शीतल जल (घड़े का ही), सूती वस्त्र, शीतल जल से स्नान, विशेषकर धूप में नहीं जाना चाहिए। विशेष परिस्थिति में छाता या सूती रुमाल या वस्त्र ओढ़कर बाहर जाना चाहिए। व्यायाम आदि भी अपने सामर्थ्य के अनुसार करना चाहिए।
    - **निषेधः**—ज़्यादा गरम, ज्यादा तेल मिर्च मसाले की चीजें, उष्ण जल स्नान, उपवास, धूप में बाहर जाना, अधिक परिश्रम, उष्ण वायु का सेवन कदापि नहीं करना चाहिए।
- **वर्षा ऋतुः**—दूषित जल, वाष्पयुक्त वायु से पाचन प्रणाली दूषित होने से पाचन प्रणाली दूषित होकर अग्नि मन्द हो जाती है। इसलिए अग्निवर्धक, वातनाशक पदार्थ, गर्म जल, नींबू, सौंठ, आम, गर्म दूध, काली मिर्च, सैंधा नमक आदि का विशेष सेवन करना चाहिए।
    - **निषेधः**—बाहर सोना, ठण्डी एवं नम हवा, दूषित जल, बासी भोजन, अधिक परिश्रम, रूक्ष पदार्थ, दिन में सोना, छाछ, दही आदि पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए।
- **शरद ऋतुः**—शरद ऋतु को आयुर्वेद में संक्रमणकालीन ऋतु माना गया है। इसे 'रोगों की माता" और यमदंश भी कहा गया है। क्योंकि वर्षा ऋतु में संचित पित्त का शरद ऋतु में प्रकोप होता है। इस ऋतु में कई प्रकार के रोगों की संभावना रहती है। यह ऋतु स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण मानी गयी है। दूध, दही, घी, पौष्टिक आहार, ताज़ा गरम भोजन, मौसमी फल, आंवला, पौष्टिक आहार—विहार, पौष्टिक पाक आदि का विशेष सेवन करना चाहिए।
    - **निषेध** :—इस ऋतु में विशेष रूप से ठण्डी हवा, ठण्डी चीजों आदि से बचना चाहिए।

रोग प्रतिरोधक औषधियाँ :—

व्यक्ति को अश्वगंधा, शतावरी, हल्दी, गिलोय, आंवला, तुलसी, दालचीनी, काली मिर्च, सौंठ, लहसुन, नींबू, शहद एवं पौष्टिक पदार्थ, मौसमी फल आदि का स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से विशेष सेवन करना चाहिए। इनसे रोग प्रतिरोधक क्षमता की वृद्धि होकर स्वास्थ्य प्रणाली सुदृढ़ होती है।

फलों का राजा आम (*Mangifera indica*)

स्वाति गोयल[1] डॉ. मनोज अदलखा[2]

सामान्य विवरण (General Description)–

- वैज्ञानिक नाम (Latin Name)– Mangifera indica Linn-,
- कुल (Family)– Anacardiaceae
- पर्याय (Synonym)– आम्र, सहकार, रसाल, आम, Mango

आम (Mangifera indica) को फलों का राजा कहा जाता है। यह Anacardiaceae कुल का बड़ा एवं सदाबहार वृक्ष है। इसकी ऊँचाई प्रायः 10–40 मीटर तक होती है। पत्तियाँ भालाकार (lanceolate), चमकदार हरी एवं सुगंधित होती हैं। ग्रीष्म ऋतु (summer season) में इसमें छोटे, पीले–सफेद फूल आते हैं जिनसे फल उत्पन्न होते हैं। फल अंडाकार से गोल, विभिन्न आकारों के और पकने पर पीले–हरे से लाल रंग के होते हैं। इसका गूदेदार (pulp) फल स्वाद में मधुर, सुगंधित तथा पौष्टिक होता है।

महत्त्व (Significance of Mango)

a. पोषणात्मक महत्व (Nutritional Significance)

- आम विटामिन A, C, E, पोटैशियम, मैग्नीशियम एवं एंटीऑक्सीडेंट्स का समृद्ध स्रोत है। यह शरीर को ऊर्जावान और स्वस्थ रखने में सहायक है।

b. औषधीय महत्व (Medicinal Significance)

- आयुर्वेद में आम की छाल, पत्तियाँ, बीज और फल का उपयोग विभिन्न रोगों जैसे दस्त, मधुमेह, हृदय रोग, रक्तस्राव, व्रण (ulcer) और संक्रमणों के उपचार में किया जाता है। इसमें रसायन (Rejuvenative) गुण भी पाये जाते हैं, जो शरीर को बल, स्वास्थ्य व दीर्घायु प्रदान करते हैं।

c. सांस्कृतिक एवं धार्मिक महत्व (Cultural & Religious Significance)

- आम की पत्तियों का प्रयोग विवाह, यज्ञ, हवन तथा धार्मिक उत्सवों में शुभ प्रतीक के रूप में किया जाता है। इसे समृद्धि और मंगल का सूचक माना गया है।

1. असिस्टेण्ट प्रोफेसर, द्रव्यगुण विभाग, राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, जयपुर
2. एसोसिएट प्रोफेसर, द्रव्यगुण विभाग, पीजीआईए, जोधपुर

d. आर्थिक महत्त्व (Economic Significance)

- भारत में आम एक प्रमुख फलोत्पादक (horticulture) फसल है और निर्यात के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। इससे आचार, जूस, पल्प, अमचूर, स्क्वैश, जैली आदि अनेक उत्पाद तैयार किए जाते हैं।

औषधीय एवं आयुर्वेदीय विशेषताएं (Pharmacognostic & Ayurvedic Properties)

- **रस**
  - कषाय (Astringent)- विशेषकर छाल (Bark)
  - मधुर (Sweet)– पका फल
  - अम्ल (Sour)– कच्चा फल
- **गुण**
  - लघु, रूक्ष – बीज
  - गुरू, स्निग्ध– पका फल
- **वीर्य** – शीत
- **विपाक** – मधुर

चिकित्सीय उपयोग (Therapeutic Uses)

- छाल (Bark)– रक्तरोधक अथवा रक्तस्तंभक – रक्त रोकने वाला, व्रणरोपक (घाव भरने वाला), स्तम्भक (अवरोधक, रोकने वाला), गर्भाशय शोथहर (गर्भाशय की सूजन कम करने वाला)
- पत्र (Leaves)– रक्तरोधक (रक्तस्तंभक), छर्दिनिग्रहण (उल्टी रोकने वाला), व्रणरोपक
- फूल (Flowers)– मूत्रसंग्रहणीय (मूत्र रोकने वाला), स्तम्भन, व्रणरोपक
- बीजगिरी (Seed Kernel)– कृमिघ्न (कृमि–रोधी), रक्तरोधक, स्तंभक, गर्भाशय शोथहर
- फल (Fruit)
  - पका आम (Ripe fruit)- स्नेहन, अनुलोमक (पाचन सुधारक), बल्य (बलदायक), वृष्य (वीर्यवर्धक), हृद्य (हृदय बलदायक), बृंहणीय (पोषण देने वाला), वर्ण्य (रूप निखारने वाला)
  - भुना हुआ कच्चा आम (Roasted unripened fruit)– दाहप्रशमन (ताप व जलन कम करने वाला)
  - बिना भुना हुआ कच्चा आम (Unroasted unripened fruit)– रोचन (भूख बढ़ाने वाला), दीपन (अग्नि प्रदीपक), पाचन (पाचन कराने वाला), रक्तपित्त प्रकोपक (रक्तपित्त बढ़ाने वाला)

औषधीय उपयोग (Pharmacological activity of Mango)

- **कैंसररोधी (Anti-cancer)** – आम के पत्ते, छाल और गुठली में ऐसे तत्व पाए जाते हैं जो कैंसर कोशिकाओं की वृद्धि को रोकने में सहायक होते हैं। Noratto et al. (2010) के अनुसार आम की अलग–अलग प्रजातियों से polyphenolic extracts लेकर कई cancer cell lines (जैसे Molt-4 leukaemia, A-549 lung, breast, prostate, colon cancer cells) पर टेस्ट किया गया है और इनमें कैन्सररोधी प्रतिक्रियाएं पाई गई हैं।
- **मधुमेहरोधी (Anti-diabetic)**– आम की कोमल पत्तियों का उपयोग रक्त शर्करा (Blood sugar) को नियंत्रित करने में किया जाता है। Bhowmik et al- (2009) के अनुसार Type-2 diabetic rats में 250 मि.ग्रा. प्रतिकिलो की एकल मात्रा ने रक्तशर्करा को उल्लेखनीय रूपेण काम किया है।
- **सूजनरोधी (Anti-inflammatory)**– छाल और पत्तियों में सूजन कम करने वाले गुण पाए जाते हैं। Mangiferin तत्त्व COX-2 और iNOS enzyme को कम करता है जिसके परिणामस्वरूप संक्रमण (inflammation) कम होता है।
- **यकृत् संरक्षक (Hepato-protective)**– आम यकृत् (Liver) की कोशिकाओं को सुरक्षित रखता है और हेपेटाइटिस जैसी स्थितियों में सहायक है। बीजगिरी (Seed Kernel) और गूदा (pulp extract) यकृत् को oxidative stress से बचाते हैं।
- **रक्तस्रावरोधी (Anti-hemorrhagic)**– आम की गुठली और छाल रक्तस्राव को रोकने में सहायक होते हैं। Mango extract में सर्पविष (snake venom) से होने वाले रक्तस्राव (hemorrhage) और necrosis को रोकने की क्षमता है।
- **धनुर्वातरोधी (Anti-tetanus)**– छाल में टिटनेस से सुरक्षा देने वाले गुण पाए जाते हैं। आम्र पत्र स्वरस (Mango leaf extracts) (ether- ethanolic) clostridium tetani बैक्टीरिया के विरुद्ध सक्रिय पाये पाए गए हैं।
- **वेदनाहर एवं ज्वरनाशक (Analgesic & Antipyretic)**– दर्द और बुखार कम करने में उपयोगी। Mango Stem bark extract में चूहों में तीव्र ज्वर (hyperpyrexia) और वेदना (pain) दोनों कम करने की क्षमता पाई गई है।
- **वृक्क–संरक्षक (Kidney protective)**– आम गुर्दों को क्षति से बचाने में सहायक है। Mango seed extract में चूहों में serum creatinine, urea और uric acid levels कम करके वृक्क संरक्षण करने की क्षमता पाई गई है।
- **अल्सररोधी (Anti-ulcer)**– आम पेट और आंतों में होने वाले अल्सर को कम करता है। Mango leaf petroleum ether - ethanol extract में aspirin-induced ulcer को कम करने में सफलता पाई गई है।
- **वसा–नाशक / कोलेस्ट्रॉल नियंत्रक (Hypolipidemic/cholesterol control)**– आम रक्त में कोलेस्ट्रॉल व ट्राइग्लिसराइड्स को कम करता है। Mango leaf aqueous extract के माध्यम से HDL को कम करने में सफलता पाई गई है। साथ ही सके माध्यम से cholesterol, triglycerides, LDL, VLDL को कम किया जा

सका है

- **जीवाणुरोधी, कवकरोधी व विषाणुरोधी (Anti-bacterial, Anti-fungal & Anti-viral)**– यह विभिन्न संक्रमणों (Infections) में लाभकारी है। Mango leaf & stem extracts (aqueous & ethanol) Staphylococcus, Streptococcus, Pseudomonas, Candida, Enterococcus के विरुद्ध सक्रिय पाये गये हैं।
- **अमीबा–रोधी, कृमिनाशक एवं मलेरियारोधी (Anti-amoebic, Anthelmintic and Anti-malarial)**– यह परजीवियों (Parasites) और मलेरिया संक्रमण से बचाव करता है। Mango extract में amoeba infection पर कार्मुकता दिखाई है।
- **प्रतिरक्षा–वर्धक (Immunomodulatory)**– आम रोग प्रतिरोधक क्षमता (Immunity) को मजबूत करता है। Mangiferin immune-stimulant की तरह काम करता है। IgG से IgM levels में वृद्धि होती है और lipid peroxidation में कमी पायी गई है।
- **हृदय–संरक्षक (Cardio-protective)**– यह हृदय की रक्षा करता है और हृदय रोग (Heart diseases) से बचाव करता है। Myocardial infarction में mangiferin ने lipid peroxidation का कम किया और cardiac enzyme गतिविधियों को सामान्य करने में सफलता पाई है।
- **अस्थिसुषिरता रोकथाम (Osteoporosis prevention)**– यह हड्डियों की मजबूती बनाए रखने में सहायक। Mango extract में अस्थिघनत्व (bone density), अस्थियों की दृढ़ता और इनके micro-architecture में उल्लेखनीय सुधार करने की क्षमता पाई गई है।
- **स्मृतिवर्धक (Memory enhancer)**– आम मानसिक शक्ति एवं स्मरण शक्ति को बढ़ाता है। Mangiferin से glioma cells में NGF और TNF-α levels की वृद्धि करके recognition memory में सुधार पाया गया है।
- **श्वसन–मार्ग प्रशस्त करने वाला (Bronchodilator)**– यह दमा (Asthma) और श्वसन संबंधी रोगों में लाभकारी है। Mango bark aqueous extract से चूहों की श्वास नाली (trachea) में acetylcholine व histamine-induced contraction सुगम हुआ है।
- **अस्थि संरक्षण (Anti-bone resorption)**– Mangiferin से parathyroid hormone induced bone resorption कम हुआ है।
- **अतिसार–रोधी (Anti-diarrheal)**– Mango seed extract (methanolic & aqueous) ने अतिसार को कम करने में सफलता पाई है।
- **विरेचक (Laxative)**– Mangiferin की oral dose (30–100 mg/kg) ने आन्त्रप्रक्रिया की गति (GIT motility) 90þ तक बढ़ाने में सफलता पाई है।

विमर्श (Discussion)–

आयुर्वेदीय संहिताओं में आम्र (Mango) को रक्तरोधक, व्रणरोपक, स्तम्भक, गर्भाशय शोथहर, स्नेहन, बल्य, हृद्य, वृष्य, वर्ण्य, बृंहण आदि गुणों वाला बताया गया है। आधुनिक शोध के अनुसार से ये सुनिश्चित होता है कि इसमें कैंसररोधी (Anti-cancer) मधुमेहरोधी (Anti-diabetic), सूजनरोधी (Anti-inflammatory), यकृत संरक्षक (Hepato-protective), रक्तस्रावरोधी (Anti-hemorrhagic), धनुर्वातरोधी (Anti-tetanus), वेदनाहर एवं ज्वरनाशक (Analgesic & Antipyretic), वृक्क–संरक्षक (Kidney protective), अल्सररोधी (Anti-ulcer), वसा–नाशक / कोलेस्ट्रॉल नियंत्रक (Hypolipidemic (cholesterol control), जीवाणुरोधी, कवकरोधी, विषाणुरोधी (Anti-bacterial, Anti-fungal, Anti-viral), प्रतिरक्षा–वर्धक (Immunomodulatory), हृदय–संरक्षक (Cardio-protective), अस्थिसुषिरता रोकथाम (Osteoporosis prevention), स्मृतिवर्धक (Memory enhancer), श्वसन–मार्ग प्रशस्त करने वाला (Bronchodilator), अस्थि संरक्षण (Anti-bone resorption), अतिसार–रोधी (Anti-diarrheal) और विरेचक (Laxative) गुण पाए जाते हैं।

हाथों की स्वच्छता का महत्त्व एवं विधि

प्रो. (डॉ.) गोविन्द प्रसाद गुप्ता[1] डॉ. अंकिता आचार्य[2]

हाथों की स्वच्छता का अर्थः

हाथों को किसी भी तरल पदार्थ से साबुन द्वारा या बिना साबुन के साफ करने की प्रक्रिया हाथ धोना कहलाती है।

हाथों की स्वच्छता का शाब्दिक अर्थ है, अपने हाथों को कीटाणुओं से मुक्त रखना ताकि बीमारियाँ ना फैलें। यह एक आसान तरीका है जिससे हम स्वयं को एवं दूसरों को कई बीमारियों से बचा सकते हैं।

हाथों की स्वच्छता का महत्व :

दैनिक कार्य करते हुए हमारे हाथ दृश्य एवं अदृश्य संक्रमित स्थानों को छूते रहते हैं। जिससे हमारे हाथ भी संक्रमित होते रहते हैं। संक्रमित हाथ स्वयं, अन्य स्थान को एवं व्यक्ति को संक्रमित करने का एक माध्यम बनते हैं। इससे बचने के लिए समय–समय पर हाथ धोना अनिवार्य है।

हाथ की स्वच्छता इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्पर्क के माध्यम से फैलने वाले कीटाणुओं को हटा कर संक्रमण की श्रृंखला को तोड़ती है। जिससे संक्रमणजन्य व्याधियों (communicable diseases) को रोकने में मदद मिलती है।

हाथों को स्वच्छ करने की विधियांः

हाथों की स्वच्छता के लिए मुख्य रूप से दो तरीके अपनाए जाते हैं :–

1. साबुन एवं पानी से हाथ धोना।
2. एल्कोहल आधारित हैण्ड सेनिटाईज़र का उपयोग करना। यदि साबुन एवं पानी उपलब्ध ना हो तो कम से कम 60 प्रतिशत एल्कोहल वाले सेनिटाईजर का उपयोग किया जा सकता है।

हाथ धोने की उचित विधि :

1. **हाथ गीले करें**– साफ पानी से दोनों हाथ अच्छी तरह भिगोएं।
2. **साबुन लगाएं**– हथेलियों पर पर्याप्त मात्रा में साबुन लें।
3. **हथेली पर हथेली रगड़ें** –झाग बनाकर हथेलियों को आपस में रगड़ें।
4. **हथेली पर हाथ की पीठ रगडें**– दाएं हाथ की हथेली को बाएं हाथ की पीठ पर और फिर इसी विधि से उल्टा करके रगड़ें।
5. **उंगलियों के बीच साफ करें**– उंगलियों को आपस में फंसाकर रगड़ें।
6. **उंगलियों के पोर साफ करें**– उंगलियों के पोर को हथेली पर रगड़ें।
7. **अंगूठा साफ करें**– एक हाथ से दूसरे अंगूठे को पकड़कर घुमाते हुए साफ करें।
8. **नाखून और उंगलियों के सिरे साफ करें**– उंगलियों के सिरों को हथेली पर रगड़ें।
9. **कलाई साफ़ करें**– दोनों कलाइयों को साबुन से अच्छी तरह से धोएं।

1. नोडल ऑफिसर, 2. सहायक प्रोफेसर, पैथालोजी व माईक्रोबॉयोलोजी विभाग
यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ होम्योपैथी, जोधपुर

10. **पानी से धोएं** – अब साफ पानी से हाथों को अच्छी तरह से धो लें।

11. **हाथ सुखाएं** – टिश्यू पेपर से हाथ पोंछ लें। (रेस्टोरेन्ट या सार्वजनिक स्थान पर लगे हुए तौलिये से हाथ नहीं पोंछें)

नोट :—यह प्रक्रिया कम से कम 20 सेकंड तक करनी चाहिए ताकि हाथों से कीटाणु पूरी तरह हट सकें।

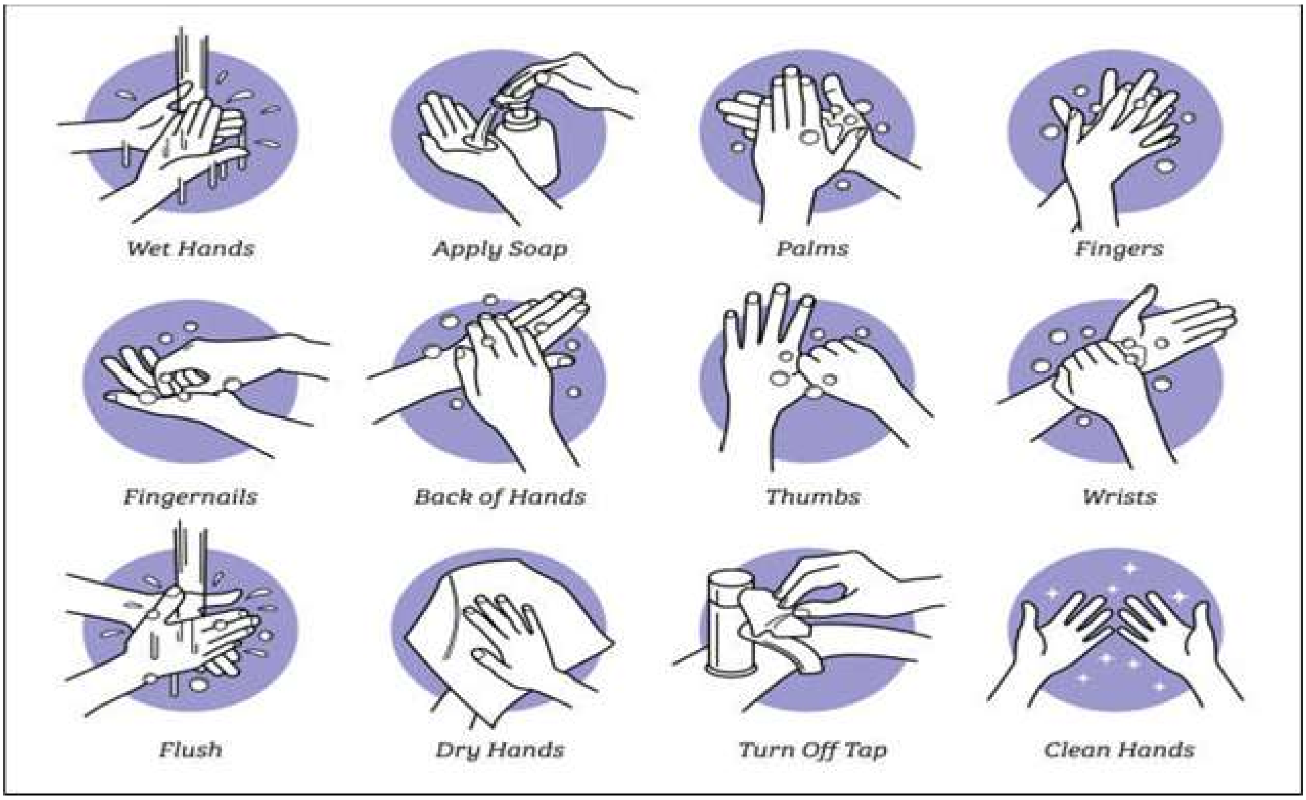

हाथों को स्वच्छ कब करना आवश्यक है:

1. भोजन तैयार करने से पहले उसके दौरान और उसके बाद।
2. खाना खाने से पहले एवं उसके बाद।
3. घर पर बीमार व्यक्ति की देखभाल करने से पूर्व एवं पश्चात्।
4. स्वयं की नाक साफ करने, खासने या छींकने के पश्चात्।
5. किसी कटाव या घाव के उपचार करने के पूर्व एवं पश्चात्।
6. शौचालय जाने के बाद।
7. डाइपर बदलने या उस बच्चे की सफाई करने के पश्चात्।
8. किसी पशु को चारा देने एवं पशु के अपशिष्ट पदार्थ को छूने के पश्चात्।
9. कचरा छूने के बाद।

हाथों की स्वच्छता रखने में आने वाली चुनौतियां:

1. ग्रामीण एवं शहरी इलाकों में साफ पानी और साबुन की कमी।

2. बच्चों को प्रारम्भ से प्रशिक्षण ना देना।
3. जल्दबाजी और आलस के कारण हाथ धोने की आदत को अनदेखा करना।
4. लोगों में जागरुकता की कमी।

निष्कर्ष

हाथ धोना एक सरल, सस्ता और प्रभावी उपाय है जो हमें विभिन्न संक्रामक रोगों से बचाता है। नियमित और सही तरीके से हाथ धोने से हमारे हाथों पर मौजूद गंदगी, कीटाणु और वायरस समाप्त हो जाते हैं। यह न केवल हमारी व्यक्तिगत स्वच्छता बनाए रखने में मदद करता है, बल्कि हमारे परिवार और समाज को भी स्वस्थ रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए हमें रोजमर्रा की आदतों में सही तरीके से हाथ धोने को शामिल करना चाहिए।

आयुर्वेद में आहार और विहारः
यकृत स्वास्थ्य के लिए एक समग्र दृष्टिकोण

डॉ. ऐश्वर्य पाण्डे[1] प्रो. अशोक शर्मा[2]

परिचय

आयुर्वेद में यकृत को एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है जो चयापचय परिवर्तन, डिटॉक्सिफिकेशन, पाचन और पित्त दोष के विनियमन को नियंत्रित करता है। इसकी पहचान रक्तधातु के मूल के रूप में की जाती है और यह कार्यात्मक रूप से रक्तवाही स्रोतों (रक्त परिसंचरण के मार्ग) से जुड़ा हुआ है। आयुर्वेदीय ग्रंथों में यकृत को भ्रूण के विकास और प्रसवोत्तर शारीरिक संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले मातृज—अवयव (मातृ मूल का अंग) के रूप में मान्यता दी गई है। यकृत से संबंधित विकार न केवल रक्त को प्रभावित करते हैं बल्कि पित्त दोष को भी प्रभावित करते हैं क्योंकि यकृत पित्त के लिए प्राथमिक स्थान के रूप में कार्य करता है।

स्थान

यकृत ऊर्ध्वजठराग्नि प्रदेश (पेट के ऊपरी भाग) में आमाशय के पास स्थित है।

यकृत की शरीर रचनात्मक स्थिति

आयुर्वेद मतानुसार यकृत की रचनात्मक स्थिति के बारे में हृदय की शरीर रचनात्मक स्थिति बताते हुए कहा गया है कि यकृत हृदय की दाहिनी ओर स्थित होता है (यह मानते हुए कि हृदय ज्यादातर बाईं ओर स्थित अंग है) और उससे नीचे की ओर स्थित होता है। आधुनिक मतानुसार भी यकृत की यही रचनात्मक स्थिति है। आधुनिक मतानुसार यह दाएं हाइपोकॉन्ड्रियम क्षेत्र में स्थित है।

यकृत की व्युत्पत्ति

यकृत शब्द दो शब्दों से बना है—या—जिसका अर्थ है बनाये रखना और कृति अर्थात् कर्म। कहा भी है

यं संयमं करोति। कृ तुक् च। (शब्दस्तोम महानिधि)।

अर्थात् संयम—रखरखाव और कई प्रकार के उपयोगी कार्य करना जैसे रक्त का निर्माण और वितरण और स्वास्थ्य का रखरखाव इसके मुख्य कार्य हैं। जो अंग व्यवस्था (या) को बनाए रखता है और कर्म (कृत) करता है, उसे यकृत कहा जाता है।

यकृत और प्लीहा इन अंगों में स्थित पित्त के एक उप प्रकार, रंजकपित्त से संबंधित हैं। पाचित आहार रस से निर्मित प्रथम धातु रस यकृत—प्लीहा के माध्यम से रक्तधातु (रक्त या रक्त कोशिकाओं) में परिणत हो जाता है।

गर्भावस्था में यकृत की रचनाः गर्भावस्था में गर्भ के यकृत और प्लीहा इन दोनों का निर्माण शोणित अर्थात् रक्त से होता है। रक्त से इन दोनों अवयवों की उत्पत्ति भी इन दोनों अंगों के बीच एक समानता का एक महत्त्वपूर्ण कारण है। यकृत एक मातृज भावों से उत्पन्न होने वाला अवयव है। चूंकि यह एक मृदु अवयव है और आयुर्वेद मतानुसार शरीर के सारे मृदु अवयव मातृज भावों से उत्पन्न होते हैं।

यकृत के कार्यः

- रक्त का प्रसादन (रक्त का निर्माण)

1 एमडी स्कॉलर 2 प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
क्रिया शारीर विभाग, म. मो. मा. राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)

- पित्त–स्थान (पित्त का स्थान)
- धात्वग्नि के माध्यम से पाचन और चयापचय
- पित्त दोष का संतुलन बनाए रखना।
- दीपन और पाचन द्वारा अग्नि (पाचकाग्नि) को बढ़ाना और धात्वग्नि के माध्यम से चयापचय को करते हुए ऊतक स्तर पर कार्य करना।
- यह रस और रक्तधातु (प्लाज्मा और रक्त) का सम्यक् निर्माण करता है। यकृत मेदधातु (वसा ऊतक) के चयापचय को भी सुविधाजनक बनाता है जो एक स्वस्थ वसा संतुलन बनाए रखने में मदद करता है।
- यह एक प्राकृतिक डिटॉक्सिफायर के रूप मे शरीर से आम (विषाक्त पदार्थों) को हटाने में सहायता करता है।
- इन कार्यों के माध्यम से, यकृत सांस्थानिक संतुलन और कल्याण को बनाये रखने हेतु पित्त और रक्त का प्रसादन करता है और इनकी बढ़ी हुई अवस्था को शांत करने में मदद करता है।

यकृदोदर, कामला (पीलिया), हलीमक और प्लीहा–वृद्धि जैसे विकार यकृत की शिथिलता का संकेत देते हैं। फैटी लिवर या हेपेटिक स्टीयाटोसिस (hepatic steatosis) कैलोरी की अत्यधिकता, इंसुलिन प्रतिरोध, मोटापा, अत्यधिक शराब का सेवन या अहितकर आहार के कारण होता है, जिसके परिणामस्वरूप तात्कालिक शोथ हुए बिना यकृत कोशिकाओं में वसा का विकृत भण्डारण होता है। शराब के कारण होने वाले फैटी लिवर को AFLD (alcoholic fatty liver disease) अन्यथा NAFLD (non alcoholic fatty liver disease) के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। फैटी लिवर लिपिड चयापचय में विकृत रूपेण हस्तक्षेप करता है, जिसके परिणामस्वरूप रक्त में कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड का स्तर बढ़ जाता है। इसके परिणामस्वरूप इंसुलिन प्रतिरोध, चयापचय सिंड्रोम (metabolic syndrome) और उच्च रक्तचाप की स्थिति उत्पन्न होती है। लगातार यकृत शोथ और रक्तस्कन्दन में व्यवधान से थ्रोम्बोसिस (रक्त का थक्का बनना) का खतरा बढ़ता है। इसके परिणामस्वरूप हार्ट अटैक, atherosclerosis का खतरा बढ जाता है।

विमर्शः

यकृत की सम्यक् कार्मुकता को सुनिश्चित करने के लिए एक संतुलित जीवन शैली (विहार) के साथ–साथ एक संरचित और पौष्टिक आहार एवं विहार शैली का पालन करना महत्वपूर्ण है। यकृत, के चयापचय, डिटॉक्सिफिकेशन और रक्तप्रसादन के लिए एक महत्वपूर्ण अंग होने के नाते, कुशलता से कार्य करने और रोग मुक्त रहने के लिए विशेष रस और गुण वाले खाद्य पदार्थों के नियमित सेवन की आवश्यकता होती है।

आयुर्वेद मतानुसार, स्वस्थ यकृत को बनाए रखने के लिए रस, गुण, वीर्य और विपाक (पाचन के बाद के प्रभाव) के अनुसार सही खाद्य पदार्थ और जड़ी–बूटियों का चयन करना महत्त्वपूर्ण है। तिक्त, कषाय और मधुर रस उग्र पित्त दोष को शांत करने, पाचकाग्नि और पोषक–धातुओं को बढ़ाने के लिए फायदेमंद माने जाते हैं।

इसी तरह, खाद्य पदार्थ और जड़ी–बूटियाँ जिनमें लघु, रूक्ष और शीत गुण होते हैं, वे अतिरिक्त यकृत पर बोझ डालने वाले वसा, आम और शोथ को कम करने में सहायता करते हैं। दैनिक आहार और दिनचर्या में इस तरह की विशेषताओं को शामिल करने से फैटी लिवर, हाइपरलिपिडेमिया, हेपेटाइटिस और संबंधित चयापचय स्थितियों जैसे यकृत विकारों के जोखिम को काफी कम किया जा सकता है।

रस	➢ तिक्त– रक्तप्रसादक एवं शोधक है, पित्त का शमन करता है और डिटॉक्सिफिकेशन करता है। ➢ कषाय– यकृत के ऊतकों को मजबूत करता है और शोथ को कम करता है।
गुण	➢ लघु– पचने में आसान होता है एवं अग्नि को बढ़ाता है। ➢ रूक्ष– अतिरिक्त कफ और वसा को कम करता है ➢ शीत–पित्त दोष को शांत करता है और शोथ को कम करता है।
वीर्य	➢ शीत– पित्त को संतुलित करता है और यकृत के ऊतकों का संरक्षण करता है। ➢ कभी–कभी उष्ण वीर्य औषधियां पाचन में सुधार के लिए अल्प मात्रा में उपयोग की जा सकती हैं। (यथा अदरक, काली मिर्च आदि)

इस प्रकार, यकृत की रक्षा करने और इसकी सम्यक कार्मुकता के लिए, एक स्थिर और पौष्टिक भोजन संयोजन को अपनाना अनिवार्य है जो यकृत के अनुकूल स्वाद और गुणों में प्रचुर मात्रा में हो। निम्नलिखित तालिका लंबे समय तक यकृत की जीवन शक्ति को बनाए रखने और रोग की प्रगति को रोकने के लिए आयुर्वेद में उक्त आदर्श जीवन शैली के अन्तर्गत आहार और विहार पर विस्तार से बताती है।

आयुर्वेद में, यकृत को चयापचय परिणमन, रक्त शोधन और डिटॉक्सिफिकेशन के लिए जिम्मेदार एक महत्वपूर्ण पित्त प्रधान अंग माना जाता है। यकृत के डिटॉक्सिफिकेशन के लिए और इसकी सम्यक् कार्मुकता को बनाये रखने के लिए निम्नानुसार आहार और जीवन शैली (विहार) पर ध्यान केंद्रित करते हुए एक विशिष्ट पथ्य–पथ्य (क्या करें और क्या न करें) योजना का पालन करना आवश्यक है।

यकृत स्वास्थ्य हेतु आवश्यक आहार विहार (पथ्य और अपथ्य) तालिका

वर्ग	पथ्य (क्या करें)	अपथ्य (क्या न करें)
जल	रोज़ 10–12 गिलास गुनगुना अथवा सामान्य पानी पियें	ठंडा पानी
दालें	मूंग दाल	उड़द दाल, अरहर दाल, कुलथ दाल, मसूर दाल, मोठ दाल, चना मसाला (मसालेदार चना), छोले (सफेद चना), राजमा, सोयाबीन
सब्ज़ियां	कद्दू, लौकी, करेला, तुरई, पेठा, शिग्रु (सहजन), परवल, लहसुन, हल्दी, आंवला, प्याज	मटर, पालक, मूली, मशरूम, अरबी, आलू, पनीर, टोफू, गोभी, फूलगोभी, टमाटर, बैंगन, भिंडी
फल	द्राक्षा (अंगूर), दाड़िम (अनार), नारियल, आंवला, चुकंदर, पपीता, खजूर, कीवी, स्ट्राबेरी, सेब, एवोकाडो, सिंघाड़ा, केला, जामुन, आड़ू	अमरूद, आम, खरबूजा, कच्चा आम, अंजीर
अनाज	दलिया, जौ, रागी, चावल	मूंगफली
पेय	छाछ, हर्बल चाय	दही, शीतल पेय, शराब, सोडा, चाय, कॉफी, एनर्जी ड्रिंक्स, पूर्ण वसा वाला दूध
जड़ी–बूटियाँ और मसाले	अदरक, लहसुन, काली मिर्च, छोटी पीपल, तुलसी, अजवाइन, हींग, जीरा, मेथी, धनिया, सौंफ, लौंग	–––
अन्य	गाय का घी, फ़िल्टर किया हुआ तेल	रिफाईन्ड तेल, वनस्पति घी, आचार, पापड़, अंडा, मांस, मछली, मांसाहार, जंक फूड, फर्मेण्टेड खाद्य पदार्थ, ब्रेड, संरक्षित/डिब्बाबंद भोजन, चटनी, वेफर्स आदि।

अनुपालनीय आदर्श जीवन शैली:

- **नींद:** रात में 7–8 घंटे की आरामदायक नींद यकृत के संरक्षण और हार्मोनल संतुलन के लिए आवश्यक है। दिन में सोने और देर रात तक जागने से बचें, क्योंकि यह प्राकृतिक दोष नियमन की व्यवस्था को बाधित करता है। सोने से पहले पिंड तैलम जैसे औषधीय तेलों से सिर और पैर की मालिश (शिरो/पादाभ्यंग) जैसे प्रयोग यकृत और तंत्रिका तंत्र को शांत रखते हैं और नव ऊर्जा प्रदान करते हैं।
- **सम्यक् शौच निवृत्ति:** मूत्र, मल, अपान वायु, उल्टी, छींक, डकार, जम्हाई, भूख, प्यास, आँसू और क्लम (परिश्रम के बाद सांस लेने जैसी प्राकृतिक आवश्यकता) को न दबाएं, क्योंकि ऐसा करने से वात वृद्धि और यकृत में विषाक्त पदार्थों (टॉक्सिन्स) का संचय होता है।
- मुख्य भोजन दोपहर के दौरान लिया जाना चाहिए, क्योंकि इस समय पाचकाग्नि सर्वश्रेष्ठ होती है। भारी भोजन से बचें। भोजन हल्का और गर्म खाना चाहिए। देर रात या सोने से तुरंत पहले खाने से बचें। अग्नि को बढ़ाने और आम बनने से रोकने के लिए भोजन को ठीक से चबाएं।
- **योग आसन:** ऐसे आसनों का अभ्यास करें जो धीरे–धीरे पेट के अंगों पर प्रभाव डालते हैं और यकृत परिसंचरण को बढ़ाते हैं। जैसे बालासन, अर्धमत्स्येन्द्रासन, पादहस्तासन, मत्स्यासन, सेतुबंधासन, अधोमुखश्वानासन, भुजंगासन, धनुरासन और त्रिकोणासन।
- **तेज़ चलना:** प्रतिदिन 15–20 मिनट तेज़ चलना फायदेमंद है। लेकिन अपच को रोकने के लिए भोजन के तुरंत बाद तेज़ चलने से बचना चाहिए।
- **व्यायाम:** चयापचय को प्रोत्साहित करने, आम (विषाक्त पदार्थों) को नष्ट करने और रक्तधातु (रक्त ऊतक) के प्रसादन करने हेतु प्रतिदिन 20–30 मिनट के लिए मध्यम शारीरिक गतिविधि में संलग्न रहें।

यकृत संरक्षण हेतु उपयोगी एकल जड़ी–बूटियाँ:

- **भूम्यामलकी (भूमि आंवला) (*Phyllanthus niruri*)**–यह एंटी–वायरल, यकृत संरक्षक (हेपेटोप्रोटेक्टिव) होती है।
- **कालमेघ (*Andrographis paniculata*)**–ये कड़वा टॉनिक है और ज्वरघ्न है।
- **कुटकी (*Picrorhiza kurroa*)** –यह पित्त संतुलन करती है और पित्त स्राव को बढ़ाती है।
- **गुडुची (*Tinospora cordifolia*)**–यह रसायन, प्रतिरक्षातन्त्र वर्धक है व यकृत के स्रावों का समुन्न्यन करती है।

यकृत के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए उपरोक्तानुसार सामान्य आहार और जीवन शैली दिशानिर्देश बताये गये है। अपथ्य से बचा जाना चाहिए, विशेष रूप से यकृत विकारों में। हालांकि, यदि यकृत सम्यक् स्थिति में हो और समग्र स्वास्थ्य स्थिर हो तो ऐसी वस्तुओं का उचित विवेक के साथ कभी–कभी और बहुत सीमित मात्रा में सेवन किया जा सकता है।

यह ध्यान देना आवश्यक है कि आहार और विहार को हमेशा प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति (शरीर संरचना) बल, अग्नि, देश (भौगोलिक आवास), काल और वय के अनुसार तैयार किया जाना चाहिए। इस प्रकार निर्धारित जीवनशैली (आहार एवं विहार) यकृत और समग्र स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और संरक्षित करने में बेहतर है।

निष्कर्ष:

आयुर्वेद में, यकृत को एक महत्वपूर्ण अंग माना गया है जो चयापचय, डिटॉक्सिफिकेशन और पित्त के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यकृत के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए, विशिष्ट जड़ी–बूटियों और दैनिक दिनचर्या के साथ एक ऐसा आहार अपनाना आवश्यक है जो पित्त को शांत करता हो, हल्का और पौष्टिक हो। परिवर्जनीय आहार व्यवस्था का पालन करके और पारंपरिक जड़ी–बूटियों का उपयोग करके, यकृत से संबंधित कई विकारों को सफलतापूर्वक प्रबंधित या टाला जा सकता है, जो **"स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणम्"** (स्वस्थ लोगों के स्वास्थ्य को संरक्षित करने) के आयुर्वेदिक सिद्धांत के अनुरूप है।

होम्योपैथिक प्रिस्क्रिप्शन में अंतिम निदान एवं ICD–11 कोड का महत्त्व

शुभम शर्मा[1], डॉ. मनाली त्यागी[2]

प्रस्तावना :

मानव सभ्यता के विकास क्रम में चिकित्सा पद्धतियों ने निरन्तर परिवर्तन और परिष्कार का अनुभव किया है। प्रारम्भ में चिकित्सा का आधार केवल लक्षणों की सामान्य व्याख्या और अनुभव पर आधारित था। बाद में आयुर्वेद, यूनानी और पारम्परिक औषधि–पद्धतियों ने रोग और रोगी के बीच संबंधों की गहन पड़ताल की। सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में आधुनिक चिकित्सा ने शरीर के भौतिक ढाँचे, अंगों और उनके रोग–परिवर्तनों पर विशेष ध्यान दिया। इसी काल में होम्योपैथी का उद्‌भव हुआ जिसने रोग के नाम या निदान के स्थान पर रोगी की संपूर्णता उसके शारीरिक, मानसिक और सामाजिक पहलुओं को चिकित्सा का आधार बनाया।

होम्योपैथी का मूल सिद्धांत "समानता का नियम" (Similia Similibus Curentur) है, जिसमें औषधि का चयन रोगी के संपूर्ण लक्षणों के आधार पर किया जाता है। यही कारण है कि यह पद्धति रोगी–केन्द्रित मानी जाती है। दूसरी ओर आधुनिक चिकित्सा विज्ञान रोग के नामकरण, वर्गीकरण और उसके निदान पर आधारित है। इसी कारण ICD (International Classification of Diseases) का विकास हुआ। आज ICD-11 को विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने वैश्विक स्तर पर मान्यता दी है।

ICD–11 का परिचय और वैश्विक महत्वः

ICD अर्थात अंतरराष्ट्रीय रोग वर्गीकरण। यह एक वैज्ञानिक प्रणाली है जिसे विश्व स्वास्थ्य संगठन ने विकसित किया है। इसका उद्देश्य सभी रोगों, लक्षणों, कारणों और मृत्यु के कारणों को एक साझा भाषा में वर्गीकृत करना है।

2022 से **ICD–**11 लागू किया गया, जो अब विश्वभर में मान्य है। इसका महत्त्व केवल चिकित्सकों के लिए ही नहीं बल्कि शोधकर्ताओं, नीति–निर्माताओं, बीमा संस्थानों और जनस्वास्थ्य विभागों के लिए भी अत्यधिक है।

ICD–11 को अपनाने के लाभः

- रोगों के नाम और प्रकार को एकरूपता मिलती है।
- सांख्यिकी और शोध में सुविधा होती है।
- विभिन्न देशों और चिकित्सा पद्धतियों में संवाद संभव होता है।
- सरकारी रिपोर्टिंग, बीमा दावों और अस्पताल प्रबंधन में पारदर्शिता आती है।

इस प्रकार **ICD–**11 को एक वैश्विक वैज्ञानिक भाषा कहा जा सकता है।

होम्योपैथी में निदान की परंपरागत भूमिकाः

डॉ. हैनिमेन ने अपनी ऑर्गेनॉन ऑफ मेडिसिन में स्पष्ट किया है कि औषधि का चयन रोगी की संपूर्णता (Totality of Symptoms) पर होना चाहिए।

1 बीएचएमएस 2023 बैच छात्र   2 एसोसिएट प्रोफेसर, मैटरिया मैडिका
यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ होम्योपैथी जोधपुर

मुख्य आधारः

शारीरिक और मानसिक लक्षणों की सूक्ष्म व्याख्या, व्यक्तिगत संवेदनशीलता और रोगी का स्वभाव, रोग का क्रमिक विकास और मियास्मैटिक पृष्ठभूमि (Psora, Sycosis, Syphilis) निदान का मुख्य आधार होता है। उदाहरण के लिए माइग्रेन के रोगियों में किसी को Pulsatilla, किसी को Nux Vomica और किसी को Iris Versicolor की आवश्यकता हो सकती है। दूसरी ओर अस्थमा और माइग्रेन जैसे भिन्न रोगों में यदि लक्षण समान हों तो एक ही औषधि जैसे Spigelia या Arsenicum album लाभ पहुँचा सकती है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अंतिम निदान और होम्योपैथिक चिकित्सा का तालमेल :

आधुनिक परिस्थितियों में अंतिम निदान और ICD Code की आवश्यकता निम्न कारणों से स्पष्ट होती हैः

- **गंभीरता और आपात स्थिति का आकलनः** निदान से यह स्पष्ट होता है कि रोग कितना गंभीर है और क्या रोगी को तत्काल रेफर करना आवश्यक है। उदाहरणः मलेरिया और वायरल फीवर के प्रारंभिक लक्षण समान हो सकते हैं। यदि सही निदान न हो तो रोग की जटिलता बढ़ सकती है।
- **निदान (Prognosis) का निर्धारणः** कुछ रोग तीव्र (Acute) होते हैं, कुछ जीर्ण (Chronic)। निदान से यह समझा जा सकता है कि रोग कितने समय तक चलेगा और उसका संभावित परिणाम क्या होगा। यथाः टॉयफाइड में रोग का क्रम और परिणाम भिन्न होता है, जबकि टी.बी. या कैंसर में दीर्घकालिक प्रबंधन की आवश्यकता होती है।
- **कानूनी और दस्तावेजी महत्वः** प्रिस्क्रिप्शन और मेडिकल रिकॉर्ड तभी वैध माने जाते हैं जब उनमें रोग का नाम और उसकी पहचान दी गई हो। ICD Code लगाने से यह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्य हो जाता है।
- **शोध और सांख्यिकीः** यदि होम्योपैथिक केस रिकॉर्ड्स में ICD Code जोड़े जाएँ तो बड़े स्तर पर शोध करना संभव होगा। इससे यह स्पष्ट हो सकेगा कि किन रोगों में होम्योपैथी विशेष रूप से प्रभावी है।
- **इंटीग्रेटिव मेडिसिन में सहयोगः** आज चिकित्सा विज्ञान में समन्वय की प्रवृत्ति है। यदि आयुर्वेद, आधुनिक चिकित्सा और होम्योपैथी को एक साथ प्रयोग करना है तो ICD Code साझा भाषा का कार्य करेगा।

निष्कर्ष :

होम्योपैथी का मूल आधार लक्षण–आधारित उपचार है। परंतु यह समझना आवश्यक है कि ICD Code औषधि–निर्वाचन का साधन नहीं है। यह केवल रोग का वर्गीकरण और दस्तावेज़ीकरण है। इससे होम्योपैथी की आत्मा को कोई क्षति नहीं पहुँचती, बल्कि यह उसे आधुनिक वैज्ञानिक जगत से जोड़ने का माध्यम है।

पोडोफॉइलम पेल्टैटम–सिद्धांत से लेकर आधुनिक ऑन्कोलॉजी (कैन्सर विज्ञान) तक

डॉ. गौरी शर्मा

परिचय

पोडोफॉइलम पेल्टैटम, जिसे मई सेब (May Apple) के नाम से भी जाना जाता है, एक देशी उत्तरी अमेरिकी पौधा है जो लंबे समय से अपने शुद्धिकरण और औषधीय गुणों के लिए मूल्यवान है। होम्योपैथी में, इसका यकृत, पित्ताशय की थैली और गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल ट्रैक्ट में महत्त्वपूर्ण उपयोग है। इसकी अनूठी दोहरी भूमिका–पारंपरिक क्रूड साइटोटॉक्सिसिटी और परिष्कृत होम्योपैथिक उपचारात्मक कार्रवाई–इसे कैंसर और उपशामक देखभाल के संदर्भ में विशेष रूप से प्रासंगिक बनाती है।

हस्ताक्षर का सिद्धांत (Doctrine of Signature)

छायादार, नम स्थानों में उगने वाला, पोडोफॉइलम छिपी हुई, गहन रुग्ण प्रक्रियाओं का प्रतीक है। इसका बड़ा भूमिगत प्रकंद, तीव्र विरेचन और शुद्धिकरण के गुणों के साथ, गैस्ट्रो–लिवर प्रणाली पर इसकी प्रतिक्रिया को दर्शाता है। यह सिद्धांत गहरी विषाक्त स्थितियों और चयापचय असंतुलन में इसकी उपचारात्मक भूमिका की ओर इशारा करता है।

रोगजनक आयाम

पोडोफॉइलम का स्वरूप एक तीव्र अतिसार, यकृत में रक्त का जमाव (congestive hepatopathy). और पित्ताशय की थैली के विकार के इर्द–गिर्द केंद्रित है। इसके लक्षणों में पानी जैसे दस्त होना, कमज़ोरी और पेट के बल लेटने से आराम मिलना शामिल है। यह पीलिया, पित्त और आंतों में जलन भी पैदा करता है, जो इसके यकृत और आंत्र पर इसकी गहरी प्रतिक्रिया के संकेत देते हैं।

नैदानिक पहचान

चिकित्सकीय रूप से, पोडोफॉइलम निम्नलिखित में उपयोगी हैः

- अत्यधिक दस्त के साथ–2 जठरांत्र संबंधी विकृति
- यकृत संबंधी विकार और पित्ताशय की थैली की बीमारी
- पुराने यकृत रोग से कैचेक्सिया
- जठरांत्र संबंधी और हेपेटोबिलियरी कैंसर में उपचारात्मक भूमिका।

प्रोफेसर, ऑर्गनॉन ऑफ मेडिसिन एंड फिलॉसफी
यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ होम्योपैथी, जोधपुर

कैंसर और इसकी उपचारात्मक भूमिका में पोडोफॉइलमः

ऑन्कोलॉजी में, पोडोफॉइलम न केवल रोग से राहत के लिए बल्कि इसकी साइटोटॉक्सिक विविधताओं के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। होम्योपैथिक चिकित्सा में, इसका उपयोग अतिसार, मतली, कमजोरी और दुर्भावना और इसके उपचार से जुड़ी पाचन संबंधी गड़बड़ी को दूर करने के लिए किया जाता है।

पोडोफॉइलम की कोशिकाओं पर कार्मुकता का माध्यम :

- **पोडोफॉइलोटॉक्सिन (कार्मुक तत्त्व)**— प्रकंद से निकाला गया पोडोफॉइलोटॉक्सिन ट्यूबुलिन से जुड़ता है और माइक्रोट्यूबुल्स के गठन को रोकता है। यह मेटाफ़ेज़ में माइटोसिस को रोकता है, जिससे कोशिका चक्र बाधित होता है और एपोप्टोसिस होता है। यह तंत्र इसके अपरिष्कृत साइटोटॉक्सिक प्रभाव को रेखांकित करता है।

- **कीमोथेरेपी डेरिवेटिव्स (एटोपोसाइड और टेनिपोसाइड)**: ये अर्ध—संश्लेषित डेरिवेटिव टोपोइसोमरेज़—II को रोकते हैं, जो इसके प्रतिरूपण (replication) के दौरान डीएनए को खोलने के लिए आवश्यक एंजाइम है। इसे अवरुद्ध करने से डबल—स्ट्रैंड का बिखराव और एपोप्टोसिस (कोशिकाओं की मृत्यु) होता है, विशेष रूप से तेजी से विभाजित होने वाली कैंसर कोशिकाओं में। इसका व्यापक रूप से आधुनिक ऑन्कोलॉजी में उपयोग किया जाता है, विशेष रूप से फेफड़ों के कैंसर, लिम्फोमा और वृषण कैंसर के लिए।

- **होम्योपैथिक क्षमता में**: पोडोफॉइलम पोटेण्टाईज़्ड रूप में एक साइटोटॉक्सिन के रूप में नहीं बल्कि महत्वपूर्ण बल के नियामक के रूप में कार्य करता है। यह गैस्ट्रो—हेपेटिक व्यवस्था में संतुलन बहाल करता है, अत्यधिक पेरिस्टालिसिस को नियंत्रित करता है, और यकृत चयापचय को व्यवस्थित करता है। यह स्वास्थ्य के लिए होम्योपैथी के साम्यता के सिद्धान्त को स्पष्ट करता है। यह आम या टॉक्सिन्स को नष्ट करता है, जिसके परिणामस्वरूप पोटेन्सी को व्यवस्थित करता है।

विशेषज्ञों के पोडोफॉइलम के बारे में चिन्तनः

- **बोरिकः** यह इसकी गैस्ट्रो—हेपेटिक क्रिया और दस्त को नियन्त्रित करता है।
- **क्लार्कः** यकृत की कार्मुकता के अन्तर्गत यह शुद्धिकरण और तीव्र विरेचन कारक है।
- **केंटः** गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल विकारों में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।
- **एलनः** कैंसर कैचेक्सिया में प्रासंगिकता के साथ यकृत और आंतों पर इसके गहन प्रभाव को व्यवस्थित करता है।

पोडोफॉइलम का उपयोग कब करें:

- पानी जैसे दस्त होने पर।
- पीलिया के साथ लिवर कंजेशन होने पर।

- पित्ताशय की थैली के विकार में।
- कमजोरी और कैचेक्सिया युक्त गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल कैंसर में।

निष्कर्ष:

पोडोफॉइलम प्राचीन हर्बल ज्ञान और आधुनिक ऑन्कोलॉजी को जोड़ने का कार्य करता है। इसका अपरिष्कृत अर्क माइटोसिस को रोककर कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करता है। जबकि होम्योपैथिक पोटेन्सी में इसका व्यवस्थित प्रयोग क्रियात्मक विकारों को नियंत्रित और ठीक करता है। इस प्रकार यह कैंसर देखभाल में एक उपचारात्मक और एक प्रशामक उपकरण दोनों स्वरूप में कार्य करते हुए स्वास्थ्य साम्यता के सिद्धांत का प्रतीक है।

होम्योपैथी में प्रतिस्पर्धा–आधारित चिकित्सा शिक्षा (सीबीएमई): चुनौतियां और अवसर

डॉ. योगेश्वरी गुप्ता[1] डॉ. पवित्रा गौर[2]

परिचयः

भारत में होम्योपैथिक शिक्षा ने ऐतिहासिक रूप से सैद्धांतिक ज्ञान पर जोर दिया है, जिसमें मैटेरिया मेडिका, होम्योपैथिक फिलॉस्फी और रेपर्टरी शामिल हैं। इनका ज्ञान मुख्य रूप से व्याख्यानों के माध्यम से अक्सर चिकित्सकीय दक्षता के बजाय स्मृति परीक्षण पर आधारित है। वर्तमान में विकसित स्वास्थ्य सेवा परिदृश्य को स्वीकार करते हुए राष्ट्रीय होम्योपैथी आयोग (एनसीएच) ने शिक्षार्थी–केंद्रित परिणामों और व्यावहारिक दक्षताओं पर ध्यान केंद्रित करके शिक्षा को आधुनिक बनाने के उद्देश्य से योग्यता–आधारित डॉयनेमिक पाठ्यक्रम (सीबीडीसी) को अपनाया है।

इसके साथ ही, भारत में मुख्यधारा की चिकित्सा शिक्षा में राष्ट्रीय चिकित्सा आयोग (एनएमसी) के तहत उत्तरदायी, सक्षम स्नातक तैयार करने के उद्देश्य से अद्यतन स्नातक नियमों के माध्यम से प्रतिस्पर्धा–आधारित चिकित्सा शिक्षा (सीबीएमई) के रूप में शैक्षणिक सुधार हो रहे हैं। हालांकि 2024–25 बैच के लिए चिकित्सा शिक्षा हेतु विशेष रूपेण सीबीएमई दिशानिर्देशों को संक्षिप्त रूप से पेश किया गया था, लेकिन विवाद उत्पन्न होने के कारण उन्हें वापस ले लिया गया और पुनः संशोधित किया गया। ये सुधार क्षमता–आधारित दृष्टिकोण की ओर एक व्यापक राष्ट्रीय बदलाव को रेखांकित करते हैं जिसका लाभ होम्योपैथी को भी मिल सकता है।

योग्यता–आधारित शिक्षा सार्थक मूल्यांकन और व्यक्तिगत रूपेण जल्दी सीखने हेतु पूर्वनिर्धारित परिणामों में छात्र की दक्षता पर जोर देती है। होम्योपैथी में, सीबीडीसी बीएचएमएस और एमडी (होम्योपैथी) कार्यक्रमों में स्पष्ट अपेक्षाओं को रेखांकित करता है, जिसमें विस्तृत पाठ्यक्रम परिणाम और उन्नत प्रशिक्षण के लिए ईपीए (EPA-Entrustable Professional Activity) शामिल हैं।

होम्योपैथी में प्रमुख पात्रताएं और ईपीए :

सीबीडीसी उन पात्रताओं को परिभाषित करता है जो महत्त्वपूर्ण हैं :

- चिकित्सापरक प्रशिक्षण (Clinical Case Taking), रेपर्ट्राईज़ेशन (repertorization), औषध चयन (remedy selection), फॉलो अप
- जैव चिकित्सा संरक्षा (Biomedical safety), जोखिम की पहचान (red-flag identification), और रेफरल चिकित्सा अभ्यास
- संचार, नैतिकता का अभ्यास और रोगी शिक्षा
- प्रलेखन और उल्लेखात्मक चिकित्सा अभ्यास (Documentation & reflective education)
- सामुदायिक स्वास्थ्य जागरुकता

स्नातकोत्तर एम. डी. (होम्योपैथी) के लिए एनसीएच ने स्ट्रक्चरड ईपीए प्रकाशित किए हैं। इनमें पर्यवेक्षणीय कार्य जैसे कि व्यापक रूप में साक्षात्कार आयोजित करना, व्यक्तिगत योजनाएं तैयार करना और स्वतंत्र रूप से उपचार की प्रगति का आंकलन करना है जो अपर्यवेक्षित अभ्यास के लिए मार्कर के रूप में स्नातक को तैयार करेंगे।

**1 प्रोफेसर व एचओडी, मटेरिया मेडिका एवं प्राचार्य, 2 सहायक प्रोफेसर, सर्जरी विभाग
स्वास्थ्य कल्याण होम्योपैथिक मेडिकल कॉलेज एंड रिसर्च सेंटर, जयपुर, राजस्थान,**

कार्यान्वयन हेतु रणनीति :

- **बैकवर्ड डिजाइनः** स्नातक परिणामों को परिभाषित करने से प्रारम्भ करते हुए, दक्षताओं और ईपीए की मैपिंग करना और फिर तदनुसार पाठ्यक्रम डिजाइन और मूल्यांकन विधियों का निर्माण करना शुरू करें।
- **शिक्षण–अधिगम विधियाँ (Teaching-Learning Methods):** इसके अन्तर्गत केस–आधारित चर्चा, सिमुलेशन लैब (यथा घाव की देखभाल, आपातकालीन चिकित्सा अभ्यास) फ़्लिप कक्षाएं, लम्बे समय तक रोगी का फॉलो अप, प्रभावी लेखन, और अंतर–पेशेवर/सामुदायिक समन्वय को शामिल करें।
- **मूल्यांकन प्रणालीः** इस हेतु एक प्रोग्रामेटिक मूल्यांकन मॉडल का उपयोग करें जिसमें:
    - नैदानिक बातचीत के लिए (mini CEX i.e. mini clinical exercise evaluation) का प्रयोग करें।
    - प्रक्रियात्मक कौशल के लिए डीओपीएस (DOPS-Direct Observation of Procedural Skills) का प्रयोग करना चाहिए। यथा ड्रेसिंग या ब्लड प्रेशर मापन में।
    - मानकीकृत स्टेशनों के साथ ओएससीई/ओएसपीई (OSCE -Objective Structured Clinical Examination and OSPE-Objective Structured Practical Examination) का प्रयोग करना चाहिए।
    - तार्किक कौशल के आंकलन करने के लिए सीबीडी (केस–आधारित चर्चा) का प्रयोग करना चाहिए।
    - प्रमाण और प्रतिफल (Evidence & Reflection) के आधार पर पोर्टफोलियो/लॉगबुक तैयार करना।
    - समग्र इनपुट के लिए एमएसएफ (मल्टीसोर्स फीडबैक) का प्रयोग करना।
    - चिकित्सकीय विगनेट्स पर आधारित निर्मित वाइवा, रिफ्लेकशन और टेस्ट आयोजित करना।
- **संकाय विकासः** शिक्षण परिणामों (Learning outcomes), फीडबैक तकनीकों, एसेसमेण्ट केलिब्रेशन और मेंटोर प्रशिक्षण हेतु कार्यशालाएं आयोजित करनी चाहिएं। इस हेतु मेंटोरशिप और रिकॉग्नीशन मैकनिज़्म तैयार करना चाहिए।
- **इलेक्ट्रॉनिक टूल्सः** ईपीए की प्रगति, फीडबैक और शिक्षार्थी समर्थन (learner support) पर नज़र रखने के लिए ई–पोर्टफोलियो और डैशबोर्ड को बढ़ावा देना चाहिए।

चुनौती के अनुसार प्रस्तावित समाधानः

- **बदलाव में आने वाली अड़चनेंः** ईपीए का प्रयोग करना, प्रारंभिक सफलता का प्रदर्शन, संकाय के प्रयासों का अभिवादन करना।
- **संकाय समय की सीमाएँः** माइक्रो एसेसमेण्ट का उपयोग करें, मूल्यांकनकर्ताओं का बदल–बदल कर प्रयोग करें, ई–उपकरणों को सुव्यवस्थित करें।
- **असंगत चिकित्सकीय जोखिमः** सिमुलेशन, सामुदायिक पोस्टिंग और साझा केस बैंक्स का उपयोग करें।
- **विश्वसनीयता का आकलनः** अंकेक्षकों का प्रशिक्षण (assessor training), दोहरी रेटिंग, मॉडरेशन हेतु बैठकें आयोजित करना।
- **होम्योपैथिक फिलॉसोफी का विश्वसनीय बनाये रखनाः** रूब्रिक्स जो व्यक्तिकरण और नैरेटिव रीज़निंग को महत्व देती है, उसकी विश्वसनीयता बनाये रखना।

होम्योपैथी में अवसरः

- **समग्र ट्रैकिंगः** रोगी द्वारा रिपोर्ट किए गए परिणाम (जैसे ऊर्जा, नींद) सीबीएमई पोर्टफोलियो में अच्छी तरह से फिट बैठते हैं।
- **वर्णनात्मकता (narrative) में दृढ़ताः** व्यक्तिकरण खुद को संचार और प्रतिक्रियात्मक दक्षता के लिए तैयार करता है।
- **प्राथमिक देखभाल में संभावनाएंः** नियमित रोगी के सम्पर्क में रहने से गहन चिकित्सकीय अभ्यास की निरन्तरता एवं अनुभव से क्षमता वृद्धि होती है।
- **एकीकृत होने की क्षमता (Integration potential):** अन्य विभागों के साथ काम करने से रेफरल सिस्टम की गुणवत्ता और मुख्यधारा की चिकित्सा पद्धति की विश्वसनीयता बढ़ती है।

सफलता का परिमापनः

सफलता संकेतकों में बेहतर ईपीए साइन–ऑफ, पोर्टफोलियो गुणवत्ता, शिक्षार्थी फीडबैक, रोगी की संतुष्टि, प्रलेखन मानक और सीबीएमई के आधार पर विद्वतापूर्ण आउटपुट शामिल हैं।

निष्कर्षः

सीबीडीसी मॉडल के माध्यम से सीबीएमई कठोर शैक्षिक और सामाजिक मानकों को पूरा करते हुए अपनी आध्यात्मिक गहराई को बनाए रखने के लिए होम्योपैथी को सशक्त बनाता है। संस्थान अच्छी तरह से परिभाषित दक्षताओं, स्ट्रक्चरड ईपीए, सार्थक मूल्यांकन और संकाय प्रशिक्षण के साथ इस परिवर्तन की शुरुआत कर सकते हैं। सोच–समझकर लागू किया गया, यह सीबीएमई मॉडल शिक्षार्थी के अनुभव और जनता के विश्वास दोनों को समृद्ध करता है। यह सुनिश्चित करता है कि होम्योपैथी आधुनिक स्वास्थ्य सेवा परिदृश्य में मजबूत और प्रासंगिक बनी रहे।

श्वास और भय का संवाद :
क्लौस्ट्रोफोबिया (Claustrophobia) में प्राणायाम की भूमिका

डॉ. शिखा सिंह तरोलिया [1] डॉ. ब्रह्मानंद शर्मा [2] डॉ. सौरभ अग्रवाल [3]

सीमित स्थानों में तीव्र भय और चिंता की विशेषता वाले क्लॉस्ट्रोफोबिया के साथ अक्सर अनियमित स्वायत्त प्रतिक्रियाएं भी होती हैं। प्राणायाम (एक यौगिक श्वास अभ्यास) ने तनाव प्रतिक्रिया में शामिल तंत्रिका परिपथों को संशोधित करके चिंता को कम करने और भावनात्मक विनियमन को बढ़ाने में आशाजनक प्रभाव दिखाए हैं। अध्ययनों से संकेत मिलता है कि नियमित प्राणायाम अभ्यास पारिस्थितिक चिंताओं और नकारात्मक प्रभाव को कम करता है और सकारात्मक भावनात्मक अवस्थाओं में सुधार करता है, साथ ही मस्तिष्क के क्षेत्रों जैसे एमिग्डाला, प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स को प्रभावित करता है, जो भावनाओं के संयोजन और चिंता नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। यह पैरासिम्पेथेटिक गतिविधि को बढ़ाकर, सहानुभूति अतिसक्रियता को कम करके, न्यूरोप्लास्टिसिटी को बढ़ावा देकर, शांति और ध्यान विनियमन का समर्थन करता है। परिणामस्वरूप, प्राणायाम चिंता के लक्षणों को कम करके और बेहतर स्वायत्त और भावनात्मक संतुलन का समर्थन करके क्लॉस्ट्रोफोबिया के प्रबंधन के लिए एक प्रभावी पूरक दृष्टिकोण हो सकता है। हालाँकि क्लॉस्ट्रोफोबिया पर विशेष रूप से आगे के नैदानिक परीक्षण सीमित हैं। मौजूदा न्यूरोफिजियोलॉजिकल साक्ष्य क्लॉस्ट्रोफोबिया सहित चिंता–संबंधी विकारों को कम करने के लिए गैर–औषधीय हस्तक्षेप के रूप में प्राणायाम की क्षमता को सिद्ध करते हैं।

सामान्य परिचय

क्लॉस्ट्रोफोबिया

क्लॉस्ट्रोफोबिया या प्रतिबंधित या बंद जगहों का बेवजह डर, एक चिंता रोग है जो किसी व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता को काफी कम कर सकता है। लिफ्ट, सुरंगें, बिना खिड़कियों वाले तंग कमरे, और यहाँ तक कि एमआरआई स्कैनर भी घबराहट, साँस लेने में तकलीफ, चक्कर आना और नियंत्रण से बाहर होने का एहसास पैदा कर सकते हैं। हालाँकि दवा और संज्ञानात्मक–व्यवहार चिकित्सा अभी भी उपचार की आधारशिला बनी हुई है, लेकिन वैकल्पिक चिकित्सा जैसे कि प्राणायाम, जो श्वास नियंत्रण की एक प्राचीन यौगिक पद्धति है, ने क्लॉस्ट्रोफोबिक लक्षणों को कम करने में आशाजनक परिणाम दिखाए हैं।

क्लॉस्ट्रोफोबिया क्यों उत्पन्न हो सकता है ?

- पिछले दर्दनाक अनुभव
- बढ़ी हुई तनाव प्रतिक्रिया
- असामान्य श्वास
- एमिग्डाला (मस्तिष्क का भय केंद्र) का अतिसक्रिय होना

क्लॉस्ट्रोफोबिया के शारीरिक लक्षण, जैसे कि मांसपेशियों में तनाव, अत्यधिक साँस लेना और ह्रदय गति में वृद्धि, तीव्र तनाव

1 स्नातकोत्तर अध्येत्री, स्वस्थवृत्त एवं योग विभाग पीजीआईए, जोधपुर
2 विभागाध्यक्ष, स्वस्थवृत्त एवं योग विभाग पीजीआईए, जोधपुर
3 सह आचार्य, स्वस्थवृत्त एवं योग विभाग पीजीआईए, जोधपुर

और घबराहट के लक्षणों के समान होते हैं। अपर्याप्त या उथली साँस लेना आमतौर पर इन लक्षणों में योगदान देता है, जो चिंता चक्र को और भी अधिक उत्तेजित करता है।

प्राणायाम

योग में, प्राणायाम विशिष्ट तकनीकों का उपयोग करके श्वास को नियंत्रित करने का अभ्यास है। संस्कृत शब्द प्राण (जीवन शक्ति या महत्वपूर्ण ऊर्जा) और 'आयाम' (विस्तार या नियंत्रण) इस नाम के मूल हैं। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र, विशेष रूप से सिम्पैथेटिक और पैरासिम्पैथेटिक प्रणालियों के बीच संतुलन, प्राणायाम में प्रयुक्त श्वास तकनीकों से प्रभावित होता है।

क्लॉस्ट्रोफोबिया के लिए प्रभावी प्राणायाम

1 नाड़ी शोधन (नासिका छिद्र से बारी–बारी से साँस लेना)

- मस्तिष्क के दोनों गोलार्द्धों को संतुलित करता है
- तंत्रिका तंत्र को शांत करता है

2 भ्रामरी (भंवरे की गुनगुनाहट जैसी साँस)

- सुखदायक कंपन उत्तेजना को कम करते हैं
- अंतर्मुखी होने में मदद करते हैं

3 शीतली / शीतकारी (शीतल साँसें)

- गर्मी और भावनात्मक तीव्रता को कम करता है
- धीमी, सोच–समझकर साँस लेने को प्रोत्साहित करता है

4 गहरी साँस लेना

- फेफड़ों की कार्यक्षमता को मजबूत करता है
- हाइपरवेंटिलेशन की प्रवृत्ति को कम करता है

5 उज्जायी प्राणायाम

- ऑक्सीजन दक्षता बढ़ाता है
- आंतरिक शांति को बढ़ावा देता है

क्लॉस्ट्रोफोबिया में प्राणायाम कैसे मदद करता है ?

1. श्वास का नियमन

क्लॉस्ट्रोफोबिक एपिसोड के दौरान, उथली और तेज साँस लेना आम बात है। शरीर को गहरी और लगातार साँस लेना सिखाते हुए प्राणायाम निम्नप्रकार से लाभदायक है :

- श्वसन दर कम कर सकता है
- ऑक्सीजन संतृप्ति बढ़ा सकता है
- घुटन की अनुभूति को दूर कर सकता है

2. चिंता और घबराहट को कम कर सकता है

नाड़ी शोधन (नासिका से बारी–बारी से साँस लेना) और भ्रामरी (मधुमक्खी की तरह गुनगुनाती साँस) जैसे कुछ प्राणायाम

अभ्यास पैरासिम्पेथेटिक तंत्रिका तंत्र को सक्रिय करते हैं, जिससे :

- मन शांत होता है
- हृदय गति कम होती है
- कोर्टिसोल (तनाव हार्मोन) का स्तर कम होता है

3. मन–शरीर जागरुकता में सुधार

सचेतन श्वास के माध्यम से, व्यक्ति अपनी शारीरिक संवेदनाओं और भावनात्मक ट्रिगर्स के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। यह आत्म–जागरुकता क्लॉस्ट्रोफोबिक प्रतिक्रियाओं को प्रबंधित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

4. ट्रिगर्स के प्रति सहनशीलता में वृद्धि

सुरक्षित वातावरण में नियमित रूप से प्राणायाम का अभ्यास करने से तनावपूर्ण परिस्थितियों में लचीलापन विकसित होता है। समय के साथ, इससे व्यक्ति की सीमित स्थानों में भी शांत रहने की क्षमता में सुधार हो सकता है।

निष्कर्ष

प्राणायाम, नियंत्रित श्वास का यौगिक अभ्यास, क्लॉस्ट्रोफोबिया पर महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव डालता है, जो एक ऐसी स्थिति है जिसमें सीमित या बंद स्थानों का तीव्र भय होता है। प्राणायाम का अभ्यास स्वायत्त तंत्रिका तंत्र को नियंत्रित करके विश्राम को बढ़ावा देता है। पैरासिम्पेथेटिक गतिविधि को बढ़ाता है जबकि सिम्पेथेटिक तन्त्र अति–प्रेरण को कम करता है। यह बदलाव हृदय, फेफड़े और मस्तिष्क के समन्वय के माध्यम से क्लॉस्ट्रोफोबिया से जुड़े तनाव और चिंता के स्तर को कम करने में मदद करता है, जिससे मानसिक स्थिति शांत होती है और घबराहट की प्रतिक्रियाएँ कम होती हैं। सुख प्राणायाम जैसे धीमे, लयबद्ध प्राणायाम अभ्यास, बैरोरिफ्लेक्स (baro-reflex) संवेदनशीलता को बढ़ाकर और हृदय की स्वायत्त प्रतिक्रियाओं को शांत करके चिंता को कम करने में सहायक पाए गए हैं, जिससे क्लॉस्ट्रोफोबिया के शारीरिक लक्षणों जैसे तेज दिल की धड़कन और साँस लेने में तकलीफ को नियंत्रित करने में मदद मिलती है। पैरासिम्पेथेटिक तन्त्र आराम और पाचन अवस्था को बढ़ावा देकर, प्राणायाम तीव्र भय प्रतिक्रिया को कम करता है और व्यक्तियों को बेहतर भावनात्मक विनियमन के साथ सीमित स्थानों का सामना करने में मदद करता है।

इसके अलावा, प्राणायाम बेहतर नींद और हार्मोनल संतुलन के साथ एक शांत मस्तिष्क अवस्था को बढ़ावा देकर मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ाता है, जो दीर्घकालिक तनाव प्रतिरोधक क्षमता में योगदान देता है, जो क्लॉस्ट्रोफोबिक प्रवृत्तियों पर काबू पाने के लिए आवश्यक है। इन प्रभावों को देखते हुए, नियमित प्राणायाम का अभ्यास क्लॉस्ट्रोफोबिया से जूझ रहे व्यक्तियों के लिए एक मूल्यवान, गैर–आक्रामक चिकित्सा के रूप में काम कर सकता है, जो अन्य मनोवैज्ञानिक उपचारों का पूरक है और जीवन की समग्र गुणवत्ता में सुधार करता है। प्राणायाम स्वायत्त संतुलन में सुधार, तनाव हार्मोन को कम करने और मानसिक शांति को बढ़ाकर क्लॉस्ट्रोफोबिया में निहित चिंता और घबराहट के लक्षणों को कम करने के लिए एक शारीरिक रूप से आधारित विधि प्रदान करता है।

दांतों की सड़न : कारण एवं निवारण

डॉ. राकेश कुमार शर्मा

दांतों का निर्माण कैल्शियम ,फॉस्फोरस और कुछ अन्य खनिजों से मिल होता है। ये हमारे शरीर का अत्यधिक कठोर अवयव हैं। ये हमारे भोजन के सम्यक् पाचन के रूप में भोजन का विखण्डन करने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। इसके अतिरिक्त ये हमारे जीवन में बोलने की प्रक्रिया में सहयोग करते है। जैसे लृ, तवर्ग (त,थ,द,ध,न), ल आदि वर्णों के उच्चारण में सहयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त ये जीवन से सम्बन्धित अन्य कुछ कार्यों में भी सहयोग करते हैं। यथाः किसी चीज़ को कुतरना, काटना आदि।

दातों में सड़न होना (tooth decay) :

जैसे कि ऊपर कहा है कि दान्त कैल्शियम ,फॉस्फोरस आदि से मिल कर कर बने होते हैं। इनकी निरन्तर सुरक्षा आवश्यक है। लेकिन जानकारी न होने और लापरवाही के कारण इनमें सड़न उत्पन्न होने लगती है। अगर हम इसका समय पर ध्यान न दें तो इसके कारण दान्तों मे सड़न के वजह से दर्द (दन्तशूल) होने लगता है। ऐसा होने पर खाना खाने में परेशानी होने लगती है। धीरे धीरे इनमें से बदबू भी आने लगती है। खाना खाते समय और बोलते या हंसते समय मुंह बार–बार खोलना पड़ता है। इसके कारण दांतों में सड़न से दान्त और मुंह दोनों की सुन्दरता नष्ट होती है जिससे हमारे व्यक्तित्व पर प्रश्न उठता है और इस कारण ये सड़न कभी–कभी हमारे आत्मविश्वास में कमी का कारण भी बनती है। दान्तों की सड़न के कई कारण हैं।

कारण :

दान्तों की नियमित स्वच्छता आदर्श और स्वस्थ जीवनशैली का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग है। किन्तु इस विधान का नियमित अथवा विधिपूर्वक पालन करने से दान्त सड़ने लगते हैं। यह एक बहुत ही सामान्य समस्या है। चूंकि दान्त मुंह के अन्दर ढ़के हुए रहते हैं। इसलिए पता नहीं चलता है और एक बारगी प्राथमिक स्तर पर इसका पता नहीं चलता है। इसलिए हम इसी परवाह नहीं करते हैं।

सामान्यत : दांतों में सड़न तीन प्रमुख कारणों से होती है। यथा :

- **खाद्य पदार्थ :** दान्तों की सुरक्षा में खान पान का बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान है। जिन खाने पीने की चीज़ों में कार्बोहायड्रेट और शक्कर की मात्रा अधिक होती है, उनसे दांतों में सड़न होने का जोखिम अधिक होता है।

एसोसिएट प्रोफेसर, रचना शारीर विभाग
पोस्ट ग्रेजुएट इन्स्टीट्यूट ऑफ आयुर्वेद,
डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर

इसमें भी अगर ऐसी खाद्य वस्तुएं दान्तों मे चिपकने वाली हों यथा मिष्ठान्न, चॉकलेट, चिप्स आदि तो इन के कारण सड़न उत्पन्न की गुजाईश और बढ़ जाती है।

- **दांतों की सफाई न करने से**: जैसा कि पूर्व में भी कहा है कि दांतों की नियमित और ठीक तरह से सफाई अत्यावश्यक है। यदि हम इस पर ध्यान नहीं देते हैं तो दान्तों में सड़न उत्पन्न हो सकती है। दान्तों की प्रतिदिन नियमित रूपेण दो बार सफाई करना नितान्त आवश्यक है। इसमें भी विशेषकर सोने से पहले। क्योंकि रात में दान्तो ं की सफाई नहीं करते हैं तो खाद्य पदार्थों के अशं दान्त में फंसे रह जाते हैं और रात में लम्बे समय तक मुंह बन्द रहने से दान्तों मे बैक्टीरिया पनप सकते हैं और इनसे दान्तों में सड़न निश्चित ही होने की संभावना रहती है। इसके अतिरिक्त चिपकने वाले खाद्य पदार्थ यथा मिष्ठान्न, चॉकलेट आदि का उपयोग करने के बाद भी दान्तों की सफाई करनी चाहिए। नियमित सफाई से मुंह मे फंसे हुए खाद्य पदार्थों के अशों को साफ़ किया जा सकता है और इसकी वजह से बैक्टीरिया का प्रभाव समाप्त किया जा सकता है। भोजन करने के तुरन्त बाद बैक्टीरिया सक्रिय हो जाते हैं। ये दांतों पर श्वेत वर्ण की परत का निर्माण करते हैं जिसे प्लाक (Plaque) के नाम से जानते हैं। बैक्टीरिया इसी प्लाक में पनपते हैं। ंदान्तो की नियमित सफाई इसी प्लॉक को नष्ट करने में सहायक है। भोजन में लिये हुए कार्बोहॉयड्रेट और शक्कर के माध्यम से बैक्टीरिया एसिड का निर्माण करता है जो दांतों में सड़न का मूल कारण है।

लक्षण :

दांतों की सड़न से शुरू में दांत की ऊपर वाली सतह जिसे इनेमल कहते हैं, इस पर एक भूरे रंग का चकत्ता बनने लगता है। यह चकत्ता धीरे–धीरे बड़ा होता है। धीरे–धीरे फिर यह एक छेद के रूप में परिवर्तित हो जाता है। इससे छिद्र वाली जगह पर धीरे–धीरे खाना फंसना प्रारम्भ हो जाता है। यह फसा हुआ खाना उस स्थान पर सड़ने की गति बढ़ा देता है। इस प्रकार बढ़ती हुई सड़न से दांत में निर्मित छेद और बड़ा हो जाता है। इस प्रकार बढ़ता हुआ यह छेद जब गहरा होने लगता है तो फिर यह दान्त की अन्दर वाली परत जिसे डेंटिन कहते हैं वहां पहुँच जाता है। इस स्थिति में वहां पर ठंडे या मीठे पदार्थों के सम्पर्क से झनझनाहट प्रारम्भ हो जाती है। और फिर जब यह छेद और भी गहरा हो जाता है तो यह दान्त के पल्प वाले भाग में पहुँच जाता है। इस क्षेत्र में दांतों की तंत्रिकाएं रहती हैं। जब यहां तक यह सड़न पहुंच जाती है तो वहां पर बहुत तेज़ दर्द होने लगता है।

बचाव :

दान्तों की सड़न से बचने के लिए निम्न उपायों को अपनाना चाहिए:

- नित्य प्रति सुबह ब्रश के माध्यम से अथवा नीम की ताज़ा टहनी के माध्यम से दांतों की सफाई अनिवार्य रूपेण करनी चाहिए।
- जैसा कि पूर्व में भी बताया है कि दिन में 2 बार दांतों को साफ़ करें, एक बार सुबह और एक बार रात्रि को सोने से पहले। रात के समय तो अनिवार्य रूपेण करनी ही चाहिए।
- दान्तों पर ब्रश को एक सामान्य स्थिति में ही रगड़ना चाहिए। जोर से रगड़ने से जबडे मे घाव हो सकते हैं।

- ब्रश के ब्रिस्टल्स सॉफ्ट होने चाहिएं और अधिकतम 3 मिनट से ज्यादा देर तक ब्रश नहीं करना चाहिए। अन्यथा दान्तों को क्षति पहुंच सकती है।
- खाने में चिपचिपे और मीठे पदार्थ कम से कम खाने चाहिएं। केक, पेस्ट्री, टाफी, चिप्स आदि भी कम खाने चाहिएं और यथा सम्भव चॉकलेट आदि खाने के उपरान्त भी एक बार ब्रश अतिरिक्त रूपेण अवश्य करना चाहिए।
- भोजन अथवा दूध या चाय आदि के सेवन के बाद अनिवार्य रूपेण कुल्ला करते समय दान्तों को हाथों से रगड़ते हुए साफ करना चाहिए।

तेजा मेला 2025 में सात दिवसीय निःशुल्क होम्योपैथिक शिविर का शुभारंभ

शिक्षक दिवस पर डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् को श्रद्धांजलि एवं पौधारोपण कार्यक्रम आयोजित

विश्वविद्यालय में दो दिवसीय राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन

विश्व आयुर्वेद परिषद्, राजस्थान, चिकित्सक प्रकोष्ठ की ओर से दो दिवसीय राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन

विश्वविद्यालय में एक और देहदान

पूर्व कुलपति प्रो. बनवारी लाल गौड़ धन्वंतरि अवार्ड से सम्मानित

विश्व गर्भनिरोधक दिवस पर मण्डोर गार्डन में जागरुकता शिविर का हुआ आयोजन

केलावा कला गांव में विशाल नशा मुक्ति एवं त्वक् रोग चिकित्सा शिविर आयोजित

विश्वविद्यालय ने ग्रेटर नोएडा स्थित शारदा
लॉन्चपैड के साथ एमओयू पर हस्ताक्षर किए

इंडो-जर्मन यंग लीडर फोरम के बीच एम.ओ.यू. आयोजित

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 पर
व्याख्यान एवं जागरुकता रैली

स्तनपान जागरुकता शिविर का आयोजन

प्रकाशन प्रारम्भ तिथि - अप्रैल 2024
प्रकाशन की भाषा - हिन्दी व अंग्रेजी

प्रकाशन अवधि - त्रैमासिक

विषय : स्वास्थ्य पत्रिका
वर्ष 01 अंक 03, अक्टूबर 2025

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णनन् राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय
कड़वड़, नागौर रोड, राष्ट्रीय राजमार्ग सं. 65, जोधपुर (राज.)
Phone : 0291-2795312, Fax : 0291-2795300
E-mail : rau_jodhpur@yahoo.co.in
Website : https://rauonline.in

स्वामी डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णनन् राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ. राकेश कुमार शर्मा, एसोसिएट प्रोफेसर, रचना शारीर विभाग द्वारा भण्डारी प्रिन्टसिटी, 23-ए, न्यू पावर हाउस के पीछे, डीजल शेड, जोधपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।
सम्पादक : डॉ. राकेश कुमार शर्मा

भारत सरकार की सेवार्थ

प्रिण्टेड बुक

सेवा में

....

....

....

....